चैतन्य लहरी

सितम्बर-अक्टूबर : 2006

चैतन्य लहरी

अंक : 9–10

इस अंक में

3 शुद्धिकरण

4 परम पूज्य श्री माता जी लन्दन में – 2006

6 सोमा की हृदयाभिव्यक्ति - चिज़विक – 18-6-2006

10 अनौपचारिक विदाई कार्यक्रम - यू.के. – 18-6-2006

10 विश्व युवाशक्ति की प्रेम-अभिव्यक्ति - यू.के. – 17-6-20

11 सर सी.पी. श्रीवास्तव का भाषण - 11 जून, 2006

13 गुरु पूजा - कबेला – 28 जुलाई, 1996

24 गुरु स्तुति

27 श्री कृष्ण पूजा - जिनेवा – 28-8-1983

32 विशुद्धि चक्र - विएना – 4-9-1983

37 सहजयोग और आरम्भिक छन्द - निर्मला योग – 1983

40 सुनॉमी से चमत्कारिक सुरक्षा

41 माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी - एक कविता

चैतन्य लहरी

प्रकाशक
निर्मल इन्फोसिस्टम्ज़ एवं टैक्नोलोजीज़ प्रा. लि.
प्लाट नं. 8, चन्द्रगुप्त हाउसिंग सोसाइटी,
पॉड रोड, कोथरुड
पुणे – 411 029
फोन: 020- 25285232

मुद्रक
कृष्णा प्रिन्टर्ज एण्ड डिज़ाइनर्ज़
292/23 औंकार नगर 'बी'
त्रीनगर, दिल्ली-110035
मोबाइल : 9212238008

आप अपने सुझाव, सदस्यता एवं जानकारी के लिए निम्न पते पर लिखें :

श्री जी.एल. अग्रवाल
निर्मल इन्फोसिस्टम्ज़ एवं टैक्नोलोजीज़ प्रा. लि.
222, देशबन्धु अपार्टमैंट, कालकाजी,
नई दिल्ली-110 019
फोन : 26422054

अपने अनुभव, सहज सम्बन्धी लेख आदि निम्नलिखित पते पर भेजें :

श्री ओ.पी. चान्दना
जी-11-(463), ऋषि नगर, रानी बाग
दिल्ली-110 034
फोन : 55356811

शुद्धिकरण

प्रिय पाठक,

चैतन्य लहरी, अंक 3-4 (मार्च–अप्रैल) 2006 में, सहज परियोजनाओं की सूची के अन्तर्गत पृष्ठ 22 पर छपी 'निर्मल इन्फोसिस्टम्ज एण्ड टैक्नोलोजीज प्रा. लि., के निदेशक मण्डल में निम्नलिखित परिवर्तन किए गए हैं :–

शासी निकाय (Governing Body)

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी	– अध्यक्षा
सर सी.पी. श्रीवास्तव	– उपाध्यक्ष
श्री मुनीश पाण्डे	– महाप्रबन्धक (G.M.)

इसी अंक के पृष्ठ–24 में 'विश्व निर्मल प्रेम आश्रम परियोजना' शीर्षक के नीचे पंक्ति–4 में 'गैर–कानूनी' के स्थान पर 'गैर–सरकारी' कर लें।

परम पूज्य श्री माता जी

लन्दन में (2006)

(लन्दन युवा-शक्ति आश्रम जाकर हमारी परमेश्वरी माँ ने इतिहास बनाया)

प्रिय सहजीगण,

इस विशेष अनुभव का आनन्द हम आपके साथ बाँटना चाहते हैं।

कल परम पूज्य माताजी और सर सी.पी. लन्दन के युवा शक्ति आश्रम में हमें मिलने तथा आशीर्वाद देने के लिए आए। उनका आगमन वास्तव में आश्चर्यजनक था, वहाँ उनकी उपस्थिति इतनी मनमोहक थी कि इसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। आश्रम की बैठक में प्रतीक्षा करते हुए, स्थान की कमी के कारण यद्यपि हम भिंचे हुए थे, फिर भी हमारे उत्साह में कोई कमी न थी। ज्योंही श्रीमाताजी ने पदार्पण किया, हम सब खड़े होकर "स्वागत आगत" गाने लगे।

चैतन्य–लहरियों का प्रवाह अत्यन्त तेज था। कार पहुँची और सभी अंकल–आंटियाँ यह देखने के लिए बैठक में आए कि सभी कुछ ठीक है या नहीं। तत्पश्चात् व्हील चेयर में बैठे हुए, पहले श्रीमाताजी ने प्रवेश किया और उनके बाद सर सी.पी. आए।

हमें बैठने के लिए कहते हुए श्रीमाताजी ने हिन्दी में कहा, "बैठ जाओ, और हम सब चैतन्य प्रवाह में उड़ रहे थे! श्रीमाताजी हमें देख रही थीं और हम वहाँ बैठे हुए थे...... और तब हम सबको देखते हुए सर सी.पी. बोले :–

"क्या आप जानते हैं कि आज हम यहाँ क्यों आए हैं? हम यहाँ इसलिए आए है क्योंकि वे (श्रीमाताजी) यहाँ आना चाहती थीं। हम यहाँ इसलिए आए हैं क्योंकि यहाँ आना उनके लिए आवश्यक था।

वे इस देश में (अर्थात यू.के.) वर्ष 1974 में प्रेम प्रसारित करने के लिए आईं और पाश्चात्य जगत के लिए सहजयोग आरम्भ किया। पैंतीस वर्षों तक वे सभी महाद्वीपों में यात्रा करती रहीं।

अब वे यह जिम्मेदारी आपको, युवा–शक्ति, (सहजयोग के भविष्य) को सौंपना चाहती हैं।"...

"आज यहाँ वे आशीर्वाद देने के लिए आई हैं! वे चाहती हैं कि आप यह जिम्मेदारी सम्भालें और सहजयोग संदेश को फैलाएं।"

तब उन्होंने उनकी ओर देखा, और फिर मुड़कर हमारी ओर देखा तथा मुस्कराते हुए पूछा:

"क्या आप सहमत हैं?"

....और सभी लोगों ने स्पष्ट और बुलन्द आवाज़ में कहा : "हाँ"!

ये सब अत्यन्त आश्चर्यजनक था, तब उन्होंने कहा:

"यदि आप चाहें तो एक भजन गा सकते हैं।"... और निःसन्देह, क्योंकि भजनों की तैयारी की गई थी, हम सब गाने लगे *"श्री जगदम्बे आई रे, मेरी निर्मल माँ।"* तत्पश्चात् श्रीमाताजी ने थोड़ा सा जल पिया। जल का हर घूँट पीने के बाद वे कह रही थीं, "आह!... बाप रे... "आह!"

...... सर सी.पी. ने पुनः बात करते हुए कहा, ''यहाँ पर ये सब, सहज आन्दोलन, पाश्चात्य जगत के लिए आरम्भ हुआ। फिर वे बोले, ''हमें आशा है कि आज के दिन 13 जून 2006 को वैसी ही एक नई शुरूआत होगी!'' फिर उन्होंने कहा, ''अब हम विदा लेंगे''..... सभी लोग अपलक उनकी ओर देख रहे थे....... फिर उन्होंने कहा, ''यदि आप चाहें तो पाँच मिनट में एक और भजन गा सकते हैं।'' और हम सब गाने लगे, *''जागो सवेरा आया है माता ने बुलाया है।''*

उसके बाद चलते हुए उन्होंने कहा, ''यू. के. में अपने अल्पवास का हमने वास्तव में आनन्द उठाया, निश्चित रूप से हम पुनः यहाँ आएंगे।''

सभी लोगों ने तालियाँ बजाईं और गाने लगे *"Mataji, Mataji... your face shines like a thousand suns, you have given us more than we could ask for, Bliss and Peace and Harmony".*

बाद में हम सब एक दूसरे की संगति का आनन्द ले रहे थे और, वास्तव में, विश्वास न कर पा रहे थे कि ऐसी घटना भी हो सकती है जो हुई!

लन्दन से हार्दिक प्रेम
(इन्टरनैट विवरण)
रुपान्तरित

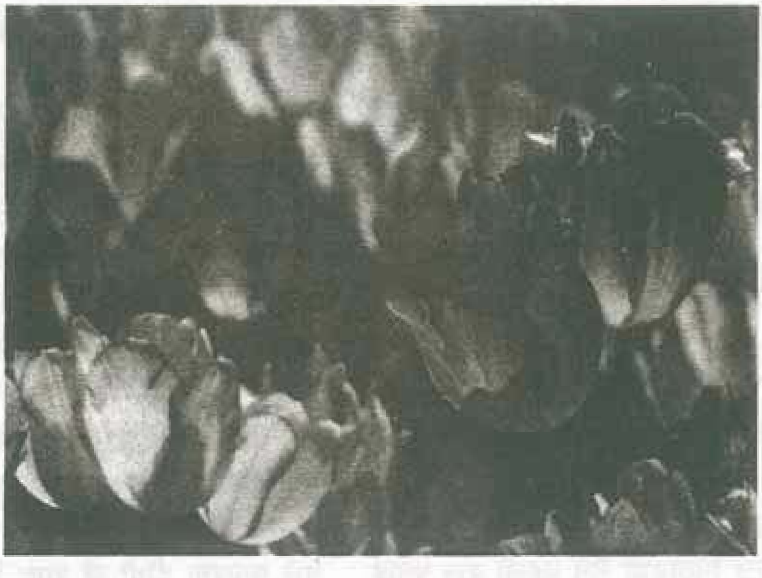

सोमा की हृदयाभिव्यक्ति
चिज़विक– यू.के. 18 जून, 2006

(चिज़विक में परम पूज्य श्रीमाताजी के घर पर सोमा का एक महीने से अधिक अल्पावास)

एक महीने से भी अधिक समय तक श्रीमाताजी के लिए खाना बनाने का अवसर प्राप्त होना मेरे लिए बहुत बड़ा वरदान था। मेरे जीवन का यह बहुमूल्यतम समय था।

5 मई, सहस्रार दिवस, से इसका आरम्भ हुआ। पूजा के स्थान से मैं और प्रमिला माँ के घर पर खाना बनाने के लिए गए। ज्योंही हम वहाँ पहुँचे सक्सेना आण्टी (भारतीय रसोई प्रभारी) ने कहा, कि आज सहस्रार दिवस है, अतः देवी भोग के लिए सभी सम्भव अच्छे–अच्छे भोज बनाओ। हृदय पूर्वक हमने बहुत सारी चीज़ें बनाईं। शाम को कुछ अन्य आस्ट्रियन भाई–बहनों के साथ हमें श्रीमाताजी के साक्षात् में एक छोटी सी पूजा में सम्मिलित होने का अवसर प्राप्त हुआ। वहाँ हमने भजन गाए। श्रीमाताजी के सम्मुख 'सहस्रार स्वामिनी' गाने की इच्छा मुझमें हमेशा से थी और सहस्रार दिवस पर संगीत समूह के साथ मुझे 'सहस्रार स्वामिनी' गाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हमने *'माता का करम'* भी गाया, श्रीमाताजी और सर सी. पी. को बहुत अच्छा लगा।

7 तारीख को, सहस्रार पूजा के दिन, मैं पुनः खाना बनाने के लिए गई। आण्टी ने कहा कि प्रसाद के लिए भिन्न प्रकार की मिठाइयाँ बनाओ। एक के बाद एक हम भिन्न प्रकार की मिठाइयाँ बनाने लगे। कुछ मिठाइयाँ मैंने पहली बार बनाई थीं परन्तु वे भी बहुत अच्छी बनीं। मुझे लगा कि मैं कुछ भी नहीं कर रही हूँ, श्रीमाताजी ही सब कुछ कर रही हैं। बंगाल मिठाइयों के लिए प्रसिद्ध है, मैं क्योंकि बंगाल प्रदेश से आई हूँ मुझे लगा कि मेरे इस कार्य के माध्यम से श्रीमाताजी कुछ कार्यान्वित कर रही हैं।

अगले दिन जब हम श्रीमाताजी के घर पर आए तो भानु ने पूछाः तो वह लड़का कहाँ है जिसने इतनी अच्छी तरह *'माता का करम'* गाया था? सर सी.पी. उसे यहाँ चाहते हैं। यह रोहित था, सर सी.पी. को उसके गाने की शैली बहुत पसन्द आई थी। अतः रोहित को आस्ट्रिया से हवाई–जहाज द्वारा वापिस आना पड़ा। बुद्ध–पूर्णिमा के दिन हमने अत्यन्त सुन्दर बुद्ध पूजा की थी। रोहित भी वहाँ पर उपस्थित था। अतः हमने श्रीमाताजी और सर सी. पी. के सम्मुख पुनः *'माता का करम'* गाया।

अगला दिन मातृ–दिवस था। भिन्न देशों से उपहार भेजे गए थे। आस्ट्रिया के लोग भी बहुत सुन्दर केक और फूल लाए थे। उस दिन एक आश्चर्यजनक घटना हुईः रात को लगभग बारह बजे स्वयं श्रीमाताजी ने आरती करने के लिए कहा। हम सब दौड़े हुए बैठक में गए और आरती गाई। यह पूजा की तरह से थी। श्रीमाताजी ने आस्ट्रियन शॉल पहनी हुई थी, जिसे आस्ट्रिया की महिलाओं ने मिलकर बनाया था। सबीने (Sabine) भी वहाँ थी। हम सब बहुत प्रसन्न थे। बाद में जब मुझे कल्पना दीदी के साथ मिलकर खाना बनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ तो उन्होंने बताया कि यह शॉल इतने हृदय से बनाई गई है कि अम्मा

(श्रीमाताजी) को यह बहुत पसन्द आई है। कभी–कभी जब श्रीमाताजी बाहर जाती हैं तो यह शॉल और स्कार्फ़ पहनती हैं।

आस्ट्रिया का मातृ–दिवस कार्ड लगातार श्रीमाताजी के शयन कक्ष में ही सजा हुआ था, उनकी कुर्सी के बिल्कुल सामने। क्या आस्ट्रिया के लोग भाग्यशाली नहीं हैं?

एक बार नाश्ते के समय श्रीमाताजी रसोई के दरवाजे के सामने खाने की मेज पर बैठी हुई थीं। हम सब नाश्ता तैयार करने में व्यस्त थे। उन्होंने हम सबकी ओर देखा। हम सबने नमस्कार किया, यह अत्यन्त सुन्दर दर्शन था।

कुछ दिन कल्पना दीदी वहाँ रहीं और हमें तीन दिन तक उनके साथ खाना बनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। तीन दिन तक हमने मिलकर खाना पकायाः अखनी पुलाव, कश्मीरी मुर्ग, कीमा, अण्डाकरी, मूँगदाल वड़ा। उन्होंने हमें बताया कि ये सब भोज श्रीमाताजी द्वारा बताई गई विधि (Recipe) के अनुरूप बनाए गए हैं।

श्रीमाताजी जब बैठक में टी.वी. पर कुछ देख रही होती थीं तो प्रायः हम गलियारे में बैठ जाते थे। मिलकर हमने कुछ हिन्दी फिल्में देखीं : लगान, मुग़लेआज़म, दिल चाहता है .....। एक बार हमने 2006 की सहस्रार पूजा देखी और आरती गाई। ऐसा करना बहुत अच्छा लगा। प्रायः जब हमारे पास कोई कार्य न होता तो हम बगीचे में खुलने वाली, श्रीमाताजी के शयन कक्ष की खिड़की के सामने या श्रीमाताजी के कमरे के सामने बैठकर ध्यान करते, इतने गहन ध्यान का आनन्द हमने लिया!

एक बार स्वयं श्रीमाताजी ने हारमोनियम बजाया, उसे देखने के लिए हम रसोई से दौड़े चले आए, ये अत्यन्त अद्‌भुत दृश्य था। इसके बाद सर सी.पी. ने गजल की दो पंक्तियाँ गाईं, 'दिल में किसी के राह किए जा रहा हूँ मैं, कैसा हसीं गुनाह किए जा रहा हूँ मैं।' यह अत्यन्त अद्‌भुत सन्ध्या थी, मानो स्वर्ग में संगीत कार्यक्रम चल रहा हो। जाने से पूर्व कल्पना दीदी ने घर में सभी लोगों को कीमती उपहार दिए। उन्होंने मुझे अपने कमरे में बुलाया और अपनी मुट्‌ठी खोली, अत्यन्त सुन्दर माणिक जड़ित सोने की बालियों का जोड़ा! मैंने कहा ये बहुत अधिक है। वो बोली कि ये माँ का आशीर्वाद है। मेरी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। उन्होंने मुझे गले लगाया और कहा कि आस्ट्रिया में बहुत अच्छी सामूहिकता है और वोल्फ गैंग (Wolf Gang) बहुत अच्छे व्यक्ति हैं। तब उन्होंने कहा, कबेला में मिलेंगे। यह अविस्मरणीय क्षण था।

मातृ दिवस के अवसर पर एक बार फ्रांस की युवा–शक्ति उपहार देने के लिए आई और उन्होंने अत्यन्त मृदु एवं मधुर गीत गाया जो बहुत ही ह्रदयस्पर्शी था। हम लोग श्रीमाताजी के भोजनकक्ष में बैठकर देख रहे थे। ये सब बहुत ही अच्छा था।

6 जून को युवाशक्ति भजन गाने के लिए आई। उन्होंने अत्यन्त सुन्दर गाया, पूरा घर आनन्द एवं चैतन्य से परिपूर्ण था। सर सी.पी. ने युवा लोगों से बात–चीत की और उन्हें युवा पीढ़ी में सहज फैलाने के लिए कहा। उन्होंने युवाशक्ति आश्रम

की तस्वीरें भेंट की। तत्पश्चात् सर सी.पी. ने सभी युवाओं को भोजन करवाने के लिए कहा। ये अत्यन्त शानदार सन्ध्या थी। **अचानक श्री माताजी ने कहा कि वे व्हील चेयर में नहीं जाना चाहतीं, चलना चाहती हैं और वास्तव में वे बैठक से शयन कक्ष तक चलकर गईं! यह अत्यन्त असाधारण घटना थी। पूरा घर आनन्द से झूम उठा, हर व्यक्ति कह रहा था कि श्रीमाताजी चल रही हैं! उसके बाद हमेशा श्रीमाताजी शयन कक्ष से बैठक तक स्वयं चलकर आर्ती और वापिस जाती।**

7 जून को रसोई की टीम श्रीमाताजी को पुष्प अर्पण करने के लिए गई। हम सबने प्रणाम किया। यह अत्यन्त सुखद क्षण था। सर सी.पी. ने कहा, कि आप सब लोग इतने अच्छे–अच्छे खाने बनाकर हमें बिगाड़ रहे हैं। ये अत्यन्त मनमोहक दर्शन था।

8 जून को हमने पहली बार श्रीमाताजी के साथ आस्ट्रिया के भजनों की डी.वी.डी. देखी। हम बरामदे में बैठे हुए थे और श्रीमाताजी बैठक में। श्रीमाताजी और सर सी.पी. दोनों को भजन बहुत अच्छे लगे। मैं भी बैठकर गाना गा रही थी, मुझे ऐसे लगा मानो मैं आस्ट्रियन लोगों के साथ बैठकर भजन गा रही हूँ। उसके बाद श्रीमाताजी और सर सी.पी. ने बहुत बार वो डी.वी.डी. देखा, विशेष रूप से *'माता का करम'* भजन। आदिशक्ति पूजा सन्ध्या के दूसरे दिन भी उन्होंने *'माता का करम'* देखा। और पूजा से वापिस आकर भी इसी भजन को सुना। कितने आश्चर्य की बात है!

आदिशक्ति पूजा के दिन प्रातः काल श्रीमाताजी का पदप्रक्षालन अनुष्ठान हुआ। यह एक छोटी पूजा की तरह से था। तत्पश्चात् घर की पाँच महिलाओं से लक्ष्मी की पाँच टोकरियाँ श्रीमाताजी के सम्मुख लाने को कहा गया। मैं भी उन पाँच महिलाओं में से एक थी। मैं और आण्टी अत्यन्त सुन्दर क्रेनबैरी (Crenberry) गिलासों के सैट लेकर आए थे। ये हमने श्रीमाताजी को भेंट किए और उन्हें प्रणाम किया। वे बहुत प्रसन्न थीं। सर सी.पी. ने कहा कि ये क्रेनबैरी गिलास बहुत ही बहुमूल्य चीज़ हैं। मुझे लगा कि अपने जीवन का बहुमूल्यतम क्षण मुझे प्राप्त हो गया है। जब हम बाहर आए तो राचेल (Rachel) मुझसे बाजार से लाए जाने वाले सामान की सूची माँग रहा था, मैंने उससे कहा कि अब मैं कुछ सोच नहीं पा रही हूँ। राचेल ने भी वही बात कही। कुछ समय पश्चात् हमने खरीदे जाने वाले सामान की सूची बनानी आरम्भ की और भोजन का कार्य आरम्भ किया। पूजा के दिन कुछ भारतीय पकवानों के साथ मैं आस्ट्रियन Schnitzel (भोज) भी पका पाई।

श्रीमाताजी के दोपहर का खाना खाने के पश्चात् हम लोग पूजा के लिए तैयार हुए और बाहर प्रतीक्षा करने लगे, ताकि श्रीमाताजी के कार में बैठते ही हम लोग भी एकदम वैन में जाकर बैठ जाएं। श्रीमाताजी जब कार में जा रहीं थी तो हम सबने उन्हें नमस्कार किया और उन्होंने आशीर्वाद मुद्रा में अपना हाथ उठाया। यह अत्यन्त अद्भुत था। हम पूजा के लिए गए और जीवन में पहली बार मैं प्रथम पंक्ति में बैठी हुई थी! पूजा में श्रीमाताजी बहुत प्रसन्न थीं और पूजा के उपरान्त कव्वाली के साथ जब हम श्रीमाताजी के सम्मुख नाच रहे थे तो वे हम पर मुस्करा रही थीं। इतना मधुर..........!

हम घर लौटे और रात का खाना तैयार किया। ये मेरा अन्तिम दिन था। जब श्रीमाताजी ने भोजन समाप्त किया तब मैंने सभी को अलविदा कहा। मेरी आँखों से आँसू बह रहे थे और मुझे लगा मानो मैं मायके से दूर, ससुराल जा रही हूँ। भारत छोड़ने के समय भी मैं इतना न रोई थी।

एक महीने से भी अधिक समय तक मुझे साक्षात् परमात्मा की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ था, ये मेरे जीवन का बहुमूल्यतम समय था। मैं नाश्ता, दोपहर का भोजन, रात्रि का भोजन, चाय और वो सभी कुछ, जो मेरे ह्रदय को अच्छा लगा और जब श्रीमाताजी ने चाहा, बना सकी। वहाँ कार्य करते हुए मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं कुछ भी नहीं करती। वो (श्रीमाताजी) विचार भेज रही हैं और मैं तो बस अपने हाथ हिला रही हूँ। बहुत सी ऐसी चीज़ें थी जो मैंने वहाँ पहली बार बनाई फिर भी सभी कुछ बहुत अच्छा बना। एक बार हमें 45 मिनट में रात्रि भोज तैयार करना था, प्रायः ऐसा कर पाना बिल्कुल असम्भव होता है परन्तु यहाँ सभी कुछ ठीक समय पर सम्पन्न हुआ। तो वे स्वयं सब कुछ करती हैं।

जब मैं वापिस आई तो मुझे लगा कि मैं स्वर्ग से पृथ्वी पर लौट आई हूँ। वहाँ पर बिल्कुल भिन्न संसार था। हमेशा पक्षी गीत गा रहे होते और सर्वत्र सुन्दर फूल खिले होते थे। वहाँ पर हर चीज़ कालातीत होती थी। कभी-कभी तो रात्रि भोज सुबह के चार बजे समाप्त होता, कभी ढाई बजे, कभी साढ़े तीन बजे। सब कुछ बहुत सुन्दर था। हमेशा हम आनन्द और चैतन्य से परिपूर्ण होते थे। इससे अधिक कोई सहजयोगी क्या कामना कर सकता है? पृथ्वी पर स्वर्ग में यह मेरा अल्पवास था।

जय श्री माताजी

सोमा
(इन्टरनैट विवरण)
रूपान्तरित

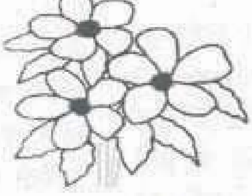

श्रीमाताजी ने अनौपचारिक विदाई कार्यक्रम की मेज़बानी की

(यू.के.– 18 जून, 2006)

इटली को अपने प्रस्थान की पूर्वसन्ध्या को श्रीमाताजी ने कृपा करके 'यू.के. सहजयोग समिति' के सदस्यों तथा युवा शक्ति के लिए अनौपचारिक विदाई कार्यक्रम का आयोजन करवाया। समिति को श्रीमाताजी की ओर से कुछ सुन्दर उपहार दिए गए और युवा शक्ति ने अपने विशेष लहज़े में उनके श्री–चरणों में गीत गाए। सर सी.पी. ने अपनी जवानी के समय की दो दिलचस्प कथाएं सुनाईं और श्रीमाताजी को नए 'यू.के. राष्ट्रीय केन्द्र' की सम्पत्ति की पुस्तिका भेंट की गई। यह संध्या सभी के लिए अत्यन्त सुखद थी।

'Ioana Popa'
(इंटरनैट विवरण)
रूपान्तरित

परमेश्वरी माँ के प्रति विश्व युवा-शक्ति की गहनतम प्रेम एवं सत्य-निष्ठा की अभिव्यक्ति

(चिज़विक, यू.के. शनिवार सांय 10.20, 17 जून 2006)

चिज़विक यू.के. में हम श्रीमाताजी की बैठक से बाहर निकले ही थे। कल श्रीमाताजी इटली के लिए रवाना हो रही हैं। आज रात 'यू.के. सहजयोग समिति' ने ब्रह्माण्ड के हृदय में कुछ समय निवास करने के लिए परमपूज्य श्रीमाताजी के प्रति हार्दिक प्रेम एवं कृतज्ञता की अभिव्यक्ति की।

इसके बाद युवा शक्ति आई। सर्वप्रथम युवा–शक्ति के तीन सदस्यों ने श्रीमाताजी के कक्ष में प्रवेश करके उन्हें स्वर्ण एवं लाल रंग के फ्रेम वाला कार्ड भेंट किया जिसमें परमेश्वरी के प्रति कृतज्ञता एवं वचनबद्धता की कविता लिखी हुई थी। इसी सप्ताह युवाशक्ति आश्रम में 13 जून मंगलवार को जब श्रीमाताजी आई थीं तो उस समय लिया गया 75 युवा शक्ति का फ्रेम किया हुआ एक फोटोग्राफ भी एक केक सहित श्रीमाताजी को भेंट किया गया। श्रीमाताजी और सर सी.पी. ने कार्ड में छपी कविताओं को पढ़ा और आशीर्वाद दिया। सर सी.पी. ने युवा आश्रम की उस सन्ध्या का पुनः स्मरण किया।

पन्द्रह और युवा शक्ति भी कक्ष में मौजूद तीन युवा शक्ति सदस्यों के पास पहुँच गए और श्रीमाताजी को प्रणाम किया। सर सी.पी. पुनः बोले 'जो चॉकलेट प्रसाद में बाँटे गए थे श्रीमाताजी ने उन्हें आशीर्वादित किया था।'

श्रीमाताजी और कक्ष में उपस्थित युवा–शक्ति ने तत्पश्चात् बाकी की युवा शक्ति को भी अन्दर आने के लिए कहा। सर सी.पी. ने विश्व के प्रति हमारी जिम्मेदारी और श्रीमाताजी के प्रति हमारी श्रद्धा के विषय में बताया और युवा शक्ति के एक सदस्य ने कहा कि श्रीमाताजी के प्रति हमारी श्रद्धा जीवन पर्यन्त रहेगी। चॉकलेट खाते हुए कक्ष तथा दरवाजों में खड़े अन्य सभी सहजयोगियों के साथ हमने 'जय गणेश' गाना शुरु किया। श्रीमाताजी बहुत प्रसन्न थीं, उन्होंने सभी को धन्यवाद कहा। हम सबने मिलकर ऊँची आवाज में श्रीमाताजी के अच्छे स्वास्थ्य और चिरायु की प्रार्थना की तथा उनके चरण कमलों में प्रणाम किया। कक्ष में चैतन्य सागर में तैरते हुए हम बगीचे और रसोई में चले गए।

श्रीमाताजी, हमारे जीवन को अपने प्रेम, चैतन्य–लहरियों, अपने स्वप्न तथा अपने कार्य को करने का सुअवसर प्रदान करने की आपकी कृपा के लिए हम हार्दिक गहनता और सत्यनिष्ठापूर्वक आपके प्रति आभारी हैं।

जय श्री माताजी

Michael Markl
(इंटरनैट विवरण)
रूपान्तरित

आदिशक्ति पूजा

(चिज़विक यू.के. - 11 जून, 2006)

इन्टरनैट विवरण

सर सी.पी. श्रीवास्तव का भाषण

(प्रतिलिपि - A Transcript)

"क्या मुझे आज्ञा है कि सर्वप्रथम मैं देवी के प्रति नतमस्तक होऊं और फिर आप सभी फरिश्तों के सम्मुख। पृथ्वी पर यह फरिश्तों की सभा है और मुझे भी इसका अंग होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं यू.के. और पूरे विश्व के सहजयोगियों और योगिनियों का गहन आभारी हूँ कि उन्होंने हमें यहाँ रहने का अवसर प्रदान किया। यू.के. में हमारे पहुँचने के बाद से अब तक अत्यन्त प्रेम, स्नेह एवं हृदय पूर्वक हर तरह से हमारी देखभाल की गई। आपके प्रति हमारी कृतज्ञता की भावनाओं की अभिव्यक्ति कर पाना सम्भव नहीं है। ऐसा लगा मानो हम अपने घर आ गए हों। अतः, डॉ. स्पायरों आपके और अन्य सभी के प्रति मैं हमारी गहनतम प्रेम और शाश्वत आभार की भावनाएं अभिव्यक्त करना चाहता हूँ।

मैं आपके कुछ बहुमूल्य क्षण कुछ ऐसी बातें कहने के लिए लेना चाहूँगा जो उनके (श्रीमाताजी) दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

आप जानते हैं कि मानवमात्र को सहजयोग का प्रेम संदेश देने के लिए उन्होंने 35 वर्षों तक विश्वभर में यात्रा की। आज पाँच महाद्वीपों के 80 से भी अधिक देशों में सहजयोग है! (इन वर्षों में) वे यही कार्य कर रहीं थीं.... तालियाँ......।

उन्होंने हवाई जहाज, हैलिकॉप्टर, कार और, यदि आपको अच्छा लगे, भारत में बैलगाड़ी से और निःसन्देह पैदल भी यात्रा की....... तालियाँ.....।

35 वर्षों तक उन्होंने ये कार्य किया, पर दो वर्ष पूर्व उन्होंने निर्णय किया कि अब समय आ गया है जब उन्हें पीछे बैठ जाना चाहिए और सहजयोग सन्देश को आगे फैलाने की जिम्मेदारी अपने बच्चों को दे देनी चाहिए। यदि आप टी.वी. समाचार देखते हैं तो जानते होंगे, कि यह विश्व कठिनाई में है, परन्तु एक सन्देश है, उनका संदेश, सहजयोग सन्देश जो प्रेम से बना है और जो सभी देशों के पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को एक परिवार के रूप में एकसूत्र में पिरोता है।

मेरे बच्चो, अब उनके लिए, आप ये जिम्मेदारी सम्भाल लो, सहजयोग सन्देश को फैलाओ। दो वर्ष पूर्व उन्होंने 'सहजयोग प्रचार-प्रसार विश्व परिषद' की स्थापना की और यह परिषद कार्यरत है। और तब से उन्होंने विश्व के सभी सहजयोगियों को आमन्त्रित किया, उनसे अनुरोध किया और उनसे सामूहिक नेतृत्व बनाने के लिए कहा ताकि सहजयोग-प्रचार-प्रसार के लिए अधिक से अधिक सहजयोगियों को सम्मिलित किया जा सके। ये कार्य हो गया है। अब यू.के. तथा अन्य बहुत से देशों में सामूहिक नेतृत्व हैं। ये सामूहिक नेतृत्व, सहजयोगियों और योगिनियों की सामूहिकताएं, अब सहजयोग प्रचार-प्रसार का कार्य कर रही हैं। ये उनकी इच्छा है और ऐसा घटित होने की उन्हें खुशी है। सहजयोग को इसी प्रकार

से फैलाया जाना है।

मैं आपका अधिक समय नहीं लेना चाहता परन्तु इस विश्व की ओर देखें तो आपको पता चलेगा कि विश्व संकट में है। यहाँ हिंसा हो रही है। केवल एक संदेश विश्व को बचा सकता है, और यह उनका संदेश है, सहजयोग में उनके प्रेम का सन्देश। यहाँ पर आप उनके साक्षी हैं!

विश्व के किसी कोने में क्या आपको ऐसी सामूहिकता मिल सकती है? नहीं, क्योंकि आप लोग प्रेम सूत्र में बँधे हुए हैं, उनके सन्देश में। हाँ, एक विश्व परिषद है जिसे सहजयोग को बढ़ाना है। परन्तु आपके लिए भी सन्देश है:– आपमें से हर एक को चाहिए कि स्वयं को सहजयोग प्रचार–प्रसार के लिए उनका दूत माने। आप जानते हैं कि आपमें से एक यदि ये सन्देश एक अन्य को दे तो एक से दो होंगे और दो से चार और कुछ ही वर्षों में यह विश्व सहजयोग से परिपूर्ण हो जाएगा, और मुझ पर विश्वास करें कि आज के विश्व को इस संदेश के अतिरिक्त किसी अन्य चीज़ की आवश्यकता नहीं है।

अतः उनके (श्रीमाताजी) सम्मुख खड़े होकर उनकी ओर से मैं आपको ये संदेश देता हूँ।

आपसे मिलना अत्यन्त सुखद है। ये वास्तव में पृथ्वी पर स्वर्ग है, परन्तु इस स्वर्ग को, इस संदेश को सर्वत्र फैलाएं, विश्व की रक्षा करें, और ये कार्य करने में आप ही सक्षम हैं! तो क्या आप सबकी ओर से मैं ये वचन दे दूँ कि आप इस कार्य को करेंगे?

सहजयोगियों की सामूहिकता से एक बुलन्द "हाँ"..........!

तालियों की गड़गड़ाहट.........।

जय श्रीमाताजी

भूषण एवं माइकल
(इन्टरनैट विवरण)
रूपान्तरित

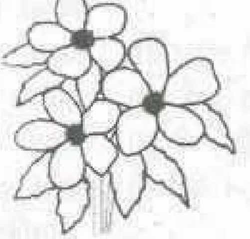

गुरु पूजा

कबेला- 28 जुलाई, 1996

(परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का प्रवचन)

आज हम गुरुपूजा करने के लिए यहां एकत्र हुए हैं। भारत में ये प्रथा प्राचीन काल में आरम्भ हुई थी, मैं सोचती हूँ, पातंजलि के समय में या हो सकता है, उससे भी पहले, जब महान साधक हुआ करते थे, उनके गुरु जंगलों में रहते थे और उनके पास जाने के लिए साधकों को उनकी आज्ञा लेनी पड़ती थी, तब कहीं उन्हें आत्म–साक्षात्कार प्राप्त होता था, बहुत थोड़े से लोगों को, किसी एक या दो को। अतः भारत में प्राचीन काल में बहुत से ऋषि मुनि हुआ करते थे। इस प्रकार गुरु प्रथा आरम्भ हुई। इसका एक अन्य कारण भी है कि भारत में कोई आयोजित धर्म न था। वहाँ पर न तो कोई पोप है और न ही कोई पादरी आदि हैं। मन्दिरों में केवल पूजा करने के लिए पुजारी होते हैं। परन्तु आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने के लिए, उच्च–जीवन के बारे में जानने के लिए साधकों को अत्यन्त महान साक्षात्कारी सन्तों के पास जाना पड़ता था। शिष्य को स्वीकार करना या न करना, पूरी तरह से गुरु पर निर्भर करता था। गुरु सबकी परीक्षा लेता था कि वे आत्म–साक्षात्कार के योग्य हैं भी या नहीं। ये परीक्षा अत्यन्त कठोर होती थी, अत्यन्त कठिन और कभी–कभी तो अत्याचार की सीमा तक इतनी कठोर कि कोई बिरला ही उसमें उत्तीर्ण होता। सहजयोग की तरह नहीं था कि 'सभी सहजयोगी हैं'। ऐसा नहीं था निःसन्देह उन्होंने आत्म–साक्षात्कार प्राप्ति के मार्ग को अत्यन्त संकरा बना दिया था। और ये गुरु कभी अपनी गद्दी नहीं छोड़ा करते थे वे इसे 'तकिया' कहते थे। हमेशा वे अपने स्थान पर बने रहते। जो लोग भी उनके पास आना चाहते, आते, उनकी आज्ञा प्राप्त करके ही वे गुरु से मिल सकते थे। आप चाहे मीलों चलकर आए हों, कोई बात नहीं, गुरु के लिए जरूरी नहीं था कि वह आपसे मिले। संभवतः गुरु के हृदय में साधकों के लिए प्रेम एवं करुणा का अभाव था। उन्हें इस बात की समझ न थी कि बेचारे साधक निष्ठा पूर्वक सत्य की खोज कर रहे हैं, अतः उन्हें कष्ट नहीं होना चाहिए।

शायद इसी कारण से उन्हें साधकों की अधिक चिन्ता न थी। हर समय वे शिष्यों की परीक्षा लेने में ही लगे रहते थे। शिवाजी के गुरु रामदास भी बहुत बार उनकी परीक्षा लिया करते थे, यद्यपि शिवाजी जन्मजात आत्म–साक्षात्कारी थे। अतः ये गुरु पद पाने के लिए गुरु की अवस्था प्राप्त करने के लिए और उसके बाद सन्त अवस्था प्राप्त करने के लिए साधकों को अत्यन्त–अत्यन्त कठोर परिश्रम करना पड़ता था। परन्तु सहजयोग में, आप जानते हैं, ऐसा कुछ नहीं है। मैंने ये सोचा कि आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करके लोग स्वयं देखेंगे कि उनमें क्या कमी है। अन्तर्वलोकन करके वे स्वयं को सुधारने का प्रयत्न करेंगे। बहुत से लोगों के मामले में ये बात ठीक है। परन्तु कुछ लोग अब भी पिछड़े हुए हैं। वे चले जा रहे हैं और सोच रहे हैं कि वे सहजयोगी हैं, उन्होंने बहुत कुछ पा लिया है तथा वे कुछ विशेष हैं। यह भ्रान्ति हर समय समस्याएं उत्पन्न करती हैं। ये भ्रान्तिपूर्ण सोच उन्हें अत्यन्त संकीर्ण, स्वार्थी, अपने तक सीमित बनाती है और इस कारण से लोग उनके सहजयोगी होने पर विश्वास नहीं कर सकते।

अतः सर्वप्रथम महत्वपूर्णतम चीज़ जो हमने समझनी है वह ये है कि यह सहजयोग इसलिए कार्यान्वित हुआ है क्योंकि परम–चैतन्य करुणा का संचार कर रहा है। इसने पहले कभी ऐसा नहीं किया, इसका ऐसा दृष्टिकोण पहले कभी नहीं था जो अब है, क्योंकि मैं माँ हूँ। यह करुणा इस प्रकार से कार्यान्वित हुई कि आप सबको आत्म–साक्षात्कार मिल गया है, **आपको ऐसी अवस्था प्राप्त हो गई है जिससे आप आत्म-साक्षात्कारी कहला सकते हैं। परन्तु फिर भी क्योंकि आपने ये अवस्था आसानी से, सस्ते में पा ली है, इसलिए, मैं सोचती हूँ कि अभी भी हम ये नहीं समझ पाए हैं कि हमें क्या प्राप्त हो गया है, अब भी हम ध्यान-धारणा, अन्तर्वलोकन और समर्पण का अभ्यास नहीं करते। निःसन्देह कुछ लोगों की स्थिति बहुत अच्छी है परन्तु हममें से अधिकतर इसी विचारभ्रम में बने हुए हैं कि हमने सब पा लिया है। तो अन्तर्वलोकन करने वाली पहली बात ये है कि क्या हमें अपनी चिन्ता है? क्या हम हर समय यही सोचते हैं कि हमें कष्ट है, हमें ये समस्या है, वो समस्या है या ऐसा किया जाना चाहिए वैसा किया जाना चाहिए। आपका चित्त यदि इस बात पर है कि हर समय आप अपने ही विषय में चिन्तित है तो आप अपने अस्तित्व के इस आवरण का भेदन नहीं कर सकते, इस खोल का जो आपके मानसिक स्वार्थों या स्वःकेन्द्रण के नियंत्रण में है। स्वःकेन्द्रण (Self-centeredness) भी आपकी उत्क्रान्ति के बिल्कुल विरुद्ध है।** मैंने देखा है कि बहुत से लोग कबेला आते हैं, उन्हें बहुत कष्ट उठाना पड़ता है क्योंकि वे सोचते हैं कि उन्हें खुले स्थान पर रहना है और अपनी सुख सुविधा का प्रबन्ध करना है। ऐसे लोगों को अभी बहुत उन्नत होना होगा। सन्त के लिए हर स्थान स्वर्गसम होना चाहिए। आपने देखा होगा कि मैं हर चीज़ का आनन्द लेती हूँ, कहीं भी रह सकती हूँ, कहीं भी सो सकती हूँ। मेरी किसी भी प्रकार की कोई माँग नहीं होती। परन्तु यदि आप अपने शारीरिक सुख–सुविधाओं, शारीरिक कष्टों के बारे में चिन्तित हैं तो अभी तक आप शारीरिक स्तर पर ही हैं। आपको उससे ऊपर उठना होगा। आपको अपने वस्त्रों की चिन्ता है। आपको ये चिन्ता है कि आप कैसे लगते हैं, कैसे पहनते हैं, कैसे वस्त्र आपको पहनने चाहिएं। ये सभी चीजें आपको सहजयोगी नहीं बना सकती। ये उन सहजयोगियों की शैली है जो अब भी बहुत अधिक सुख–सुविधाएं चाहते हैं।

तो आपको क्या करना चाहिए? आपको यदि सुख–सुविधाओं की आदत है तो जाकर गली में सोने का प्रयत्न करें। मैं ऐसा नहीं करूंगी, परन्तु आप कर सकते हैं, या आप पेड़ पर सो सकते हैं। चाहे गिर जाएं कोई बात नहीं। शरीर को ये समझाने के लिए कि आप शारीरिक सुखों से बंधे नहीं है। अपने शरीर को दण्डित करने के लिए सभी प्रकार के कदम उठाएं। ये देखना सबसे बड़ी बात है कि आप शारीरिक सुखों के गुलाम नहीं है। आपके पास यदि सुख–सुविधाएं हैं तो ठीक है और यदि नहीं हैं तो भी ठीक है। सहजयोगी के लिए आवश्यक है कि वह सन्त की तरह से रह सके, जरूरी नहीं कि वह सन्यासी बन जाए, अन्दर से ही आपका शरीर ऐसा होना चाहिए कि इसे आप अपने नियंत्रण में रख सकें। कहीं भी आप कैसे–नहीं सो सकते, कहीं भी आप क्यों नहीं सो सकते? फिर वे स्नानागारों का बहुत सुखद प्रबन्ध चाहते हैं, ये वो। ये सभी विचार इसलिए हैं कि आप अपने बारे में बहुत चेतन हैं परन्तु अतिचेतनता नहीं है। अपने लिए आप सभी कुछ प्रथम दर्जे का चाहते हैं और कोई अन्य यदि इस मामले में दखलन्दाजी करे तो आपको अच्छा नहीं लगता। कोई व्यक्ति यदि बूढ़ा

हो, जिसे बहुत आवश्यकता हो उसकी बात तो मैं समझ सकती हूँ। उसे तो कुछ शारीरिक सुविधाएं मिलनी ही चाहिएं। परन्तु आजकल तो युवा लोग भी बहुत अधिक सुख–संचालित हैं। ये सहजयोगियों वाली बात नहीं है।

मैंने देखा है कि पश्चिम के लोग इस मामले में कहीं बेहतर है। जब वे भारत गए तो उन्होंने मुझे बताया कि सुविधाजनक बसों की अपेक्षा उन्हें राज्य–परिवहन की बसें पसन्द हैं। मैंने कहा, "क्यों?" श्रीमाताजी, क्योंकि सामान से भरी इन बसों में हम उछल सकते हैं, इनकी खिड़कियाँ खुली होती हैं, शुद्ध हवा में हम श्वास ले सकते हैं। वो तो बैलगाड़ी पर भी चलना चाहते थे। कहने से अभिप्राय ये है कि वे इन सब चीज़ों का आनन्द उठाते हैं। वास्तव में यदि आप देखें, तो पश्चिमी देशों में अधिक से अधिक लोग ग्रामीण जीवन शैली अपना रहे हैं। ग्रामीण जीवन शैली का मज़ा उन्हें इस सुख–सुविधा से सम्पन्न शैली से कहीं अधिक भाता है। परन्तु भारतीय, और मैं कहूँगी मलेशिया के, लोगों में ये बात नही है। मैं सोचती हूँ कि पश्चिमी देशों में मैं जिन लोगों से मिली उनमें से अधिकतर बहुत महान हैं क्योंकि वो कहीं भी सो सकते हैं, कुछ भी खा सकते हैं। आप उनसे पूछें कि खाना कैसा लगा, तो उत्तर होगा "श्रीमाताजी मैं नहीं जानता कि मैंने क्या खाया था।" यह चिन्ह है। यह उस व्यक्ति की निशानी है जिसे इस बात की चिन्ता नहीं है कि वह क्या खा रहा है, उसे क्या मिल रहा है, उसका स्वाद क्या है। मुझे ये पसन्द है, मुझे वो पसन्द है, ये शब्द छूट जाते हैं। ये कठिन नहीं है, ये कठिन नहीं है। हो सकता है आप ये सोचें कि मैं आपसे कोई कठिन कार्य करने को कह रही हूँ परन्तु ये बिल्कुल भी कठिन नहीं है। आपने **यदि आस-पास के लोगों को प्रभावित करना है तो आपको सन्त बनना ही होगा। और यदि आप बेकार का हल्ला मचाने वाले हैं, बतंगड़ हैं तो आप अन्य लोगों को विश्वास नहीं दिला सकते कि आपको आत्म साक्षात्कार प्राप्त हो गया है।**

बहुत से लोग मुझे कहते हैं, "लोगों को इतना कुछ करना पड़ा, इस कार्य के लिए हिमालय पर जाना पड़ा, इतनी समस्या के बाद उन्हें आत्म–साक्षात्कार प्राप्त हुआ। आपने कैसे इन लोगों को आशीर्वादित कर दिया है? कुछ महान सन्त भी मुझसे पूछते हैं कि इन लोगों को आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने का क्या अधिकार है? आपने इन्हें आत्म–साक्षात्कार क्यों दिया? इन्होंने क्या प्राप्त किया है? मैंने कहा, "केवल अपनी इच्छा।" उनकी इच्छा बहुत तीव्र थी कि उन्हें आत्म–साक्षात्कार प्राप्त होना चाहिए और इसलिए उन्हें आत्म–साक्षात्कार प्राप्त हो गया है। परन्तु इसकी गहनता में उतरने के लिए केवल इच्छा काफी नहीं है। आपको अपनी आत्मा पर निर्भर होना होगा। अपनी आत्मा के प्रकाश पर, आपको देखना चाहिए कि कमी कहाँ है। ये बहुत महत्वपूर्ण बात है। स्वयं से प्रश्न करें, "मुझे इसकी आवश्यकता क्यों है, ये मुझे क्यों चाहिए, लक्ष्य क्या है?" क्योंकि जैसे आपने देखा है बाकी का सारा संसार तो पागल है, मैं इसे पागल कहती हूँ क्योंकि सभी लोग तुच्छ चीज़ों के पीछे दौड़ रहे हैं। वो ऐसी चीज़ें चाहते हैं जो आध्यात्मिकता के लिए अर्थहीन हैं। अतः आध्यात्मिकता अपने आप में ही आत्म–संतोष प्रदायी होनी चाहिए। आपमें यदि आध्यात्मिक गुण हैं तो आप आत्मसन्तुष्ट हैं। और आपके अन्दर का ये आत्म–संतोष आपको उस आनन्द के सागर तक ले जाएगा, जिसके बारे में मैं आपको बताती रही हूँ और जिसका वर्णन सभी धर्मग्रन्थों में किया गया है।

सहजयोगियों के लिए जिस शब्द का उपयोग हम करते हैं वह है 'निरानन्द'। निरानन्द अर्थात आनन्द की वह अवस्था जिसमें किसी अन्य चीज़ की आवश्यकता न हो। आनन्द स्वयं आनन्द है। आप केवल आनन्द का आनन्द ले रहे हैं, आपको प्रसन्न करने के लिए किसी और चीज़ की आवश्यकता नहीं है। 'निरानन्द' अवस्था में प्राप्त होने वाले आनन्द के कारण आप प्रसन्न हैं। आप यदि जाकर ये देखें कि ये सन्त किस प्रकार रहे तो आप हैरान होंगे! किस प्रकार वे अपने जीवन चलाते हैं, आपको अत्यन्त आश्चर्य होगा। कितने–कितने दिन खाने के बिना वे व्रत किया करते थे, इसकी उन्होंने कभी चिन्ता नहीं की। उन्होंने कभी नहीं सोचा कि यह व्रत था, वो तो यही सोचते थे कि हमारे पास खाना नहीं है सो नहीं है। निःसन्देह आपको इन सारी स्थितियों में से नहीं निकलना पड़ा, आपको आत्म–साक्षात्कार मिल गया है। अतः अब आपमें कौशल प्राप्त करने की शक्ति है, अब आपमें ये शक्ति है।

एक अन्य चीज़ जो मैंने सहजयोगियों में देखी है कि उनमें दूसरों के प्रति मनोमालिन्य है। सहजयोग प्रेम का आशीर्वाद है, करुणा का आशीर्वाद है। सहजयोगियों में किसी भी प्रकार की घृणा, बदले की भावना या क्रोध का कोई स्थान नहीं है। आपमें यदि ये दुर्गुण है तो आप इस पर विजय प्राप्त करें। ये बहुत अच्छा अवसर है। आपको यदि कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो गर्ममिजाज हो, क्रोधी स्वभाव का हो तो जाकर ऐसे व्यक्ति को मित्र बनाएं। देखें कि आप उस व्यक्ति से निभा सकते हैं या नहीं। कोई बिगड़ैल व्यक्ति यदि है तो उसके साथ मित्रता स्थापित करें और देखें कि आपको वह शान्ति प्राप्त होगी जो सभी प्रकार की घृणा, सभी प्रकार के क्रोध और बुराइयों से आपको दूर रखेगी। कुछ सहजयोगी एकदम से क्रोधित हो जाते हैं। मैं कहूंगी कि वे सहजयोगी हो ही नहीं सकते क्योंकि यदि आपको अपने क्रोध पर नियंत्रण नहीं है तो आपमें करुणा एवं प्रेम की शक्ति कैसे आ सकती है? परन्तु आपको तो यह नियंत्रण भी नहीं करना पड़ता, ये पहले से ही है। एक बार यदि आप ये अवस्था प्राप्त कर लें तो मात्र इसे देखें। प्राचीन काल में अधिकतर सन्त लोग बहुत क्रोधी स्वभाव के हुआ करते थे। संसार की मूर्खता उन्हें सहन न हो पाती थी। वे अत्यन्त क्रोधी तबीयत के होते थे और वहाँ से दूर भाग जाते थे। मैं नित्यानन्द स्वामी नामक एक सन्त को जानती हूँ जो हमेशा पेड़ पर रहते और कोई यदि उनके पास आने का प्रयत्न करता तो वे उस पर पत्थर फेंकते। लोगों को वो सहन न कर पाते थे, सभी को बाहर बिठाया जाता। परन्तु आपको ये सब करने की आवश्यकता नहीं है आपके पास सभी दुखदायी, ईर्ष्यालु तथा आक्रामक लोगों का प्रेम एवं स्नेह प्राप्त करने की विधि है। इस दिशा में यदि आप थोड़ा सा प्रयत्न करें तो ये कार्य कठिन नहीं है। कोई गर्ममिजाज व्यक्ति यदि मिल जाए तो अधिकतर लोग भाग खड़े होते हैं। वे उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहते। जो लोग शान्त हैं, अच्छे स्वभाव के हैं, उनसे तो कोई भी मित्रता कर सकता है इसमें क्या महानता है? इसमें क्या अच्छाई है, क्या माधुर्य है? परन्तु गर्म–मिजाज व्यक्ति से आप किस प्रकार बात करते हैं, किस प्रकार उसे सम्भालते हैं, ये बात महत्वपूर्ण है। आपका प्रेम निश्चित रूप से उसे पिघला देगा क्योंकि वह भी सहजयोगी है। मैं उन लोगों की बात नहीं कर रही हूँ जो सहजयोगी नहीं है। परन्तु सहजयोगियों के प्रति आपको अत्यन्त करुणा, स्नेह एवं प्रेममय होना होगा।

एक अन्य चीज़ जाननी भी हमारे लिए आवश्यक है कि हमें ये आत्म–साक्षात्कार माँ के प्रेम के माध्यम से प्राप्त हुआ है। केवल मेरी करुणा ने कार्य किया है, केवल माँ की करुणा की शक्ति ही इस कार्य को कर सकती थी। चाहे यह प्रेम पत्थरों की ओर बह रहा हो, पर्वतों की ओर या किसी अन्य ठोस चीज़ की ओर, इसकी लहरियाँ (Ripples) वापिस आती हैं। उन्हें वापिस आना पड़ता है। उसी प्रकार से अब आप लोगों, जिन्हें आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो गया है, को समझना होगा कि आपको केवल करुणा एवं प्रेम की ही शक्ति प्राप्त है, कोई अन्य नहीं। **आप यदि स्वयं से प्रेम करते हैं, यदि आपको केवल अपनी चिन्ता है, अपने परिवार की और अपने बच्चों की तो अभी तक आपने कुछ अधिक प्राप्त नहीं किया है।** आप केवल अपने बारे में चिन्तित है, क्योंकि यही आपकी गतिविधियों का सीमित क्षेत्र है! परन्तु यदि आप इस दायरे को तोड़कर ऐसे स्थान खोज सके जहाँ आप अपने प्रेम की अभिव्यक्ति कर सकें तो बेहतर है। आप ऐसा कर सकते हैं। जैसे कहते हैं कि पानी अपना स्तर खोज लेता है, इसी प्रकार से उस करुणा को भी सभी स्थानों, सभी गड्ढों तथा सर्वत्र बहकर अपना स्तर खोज लेना चाहिए। परन्तु यदि आप स्वयं से ही सन्तुष्ट हैं, किसी अन्य की आपको चिन्ता नहीं हैं, ये विश्वास कर लेने का प्रयत्न कर रहे हैं कि आप महान आत्मा हैं क्योंकि आप सहजयोगी हैं, तो मैं अवश्य कहूंगी कि आप बहुत बड़ी गलती पर हैं। इसी जीवन–काल में आपने ये अवस्था प्राप्त करनी है। इसी जीवन–काल में आप अपने अन्दर उस अवस्था तक पहुँच सकते हैं।

परमात्म-साक्षात्कार (God -Realization)

तीसरी चीज़ जो सहजयोगियों को परेशान करती है कि ''श्रीमाताजी हम परमात्म-साक्षात्कार **चाहते हैं।'' इस बात पर मुझे हँसी आती है। देखिए, ये तो पहले से ही है, पहले से है, जैसे एक बार यदि आप समुद्र में प्रवेश कर लें और कहें कि श्रीमाताजी हम समुद्र की तह में जाना चाहते हैं, आप जा सकते हैं। आगे को बढ़ें और वहाँ पहुँच जाएंगे!**

इसी प्रकार से एक बार जब आत्म-साक्षात्कार को विकसित करके करुणा के सागर में कूद पड़ते हैं तो कुछ अन्य प्राप्त करने की आवश्यकता ही नहीं है। प्राप्त करने का एहसास, ''मुझे वो होना चाहिए, मुझे ये होना चाहिए'' ये सब बातें मानव-मस्तिष्क की तड़पन मात्र है। ये अब समाप्त हो जानी चाहिएं, अब आप दिव्य व्यक्ति हैं। **अब आपको ये नहीं सोचना चाहिए कि मुझे ये अवस्था प्राप्त करनी चाहिए, वो अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। बस, फिसलते (गहनता में) चले जाएं। अपने सिर पर लादे हुए सभी बोझ उतार दें और यह कार्यान्वित हो जाएगा। मैं हमेशा से आपको यही कहती आई हूँ कि करुणा के सागर में आपने स्वयं को विलीन कर देना है।**

अभी भी कुछ ऐसे लोग हैं जो आगे बने रहना चाहते हैं, विशेष रूप से भारतीय लोग सबसे आगे इकट्ठे बैठना चाहते हैं। इसका उन्हें कोई अधिकार नहीं है। सबसे आगे बैठने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। किसी को भी सबसे आगे बैठने का या आगे–आगे स्थान खोजने का कोई अधिकार नहीं है। पूर्ण सन्तोषपूर्वक जहाँ भी स्थान मिल जाए, उन्हें बैठ जाना चाहिए। **आप चाहे सामने बैठें या किसी अंधेरे कोने में आप मेरी चैतन्य लहरियाँ पा सकते हैं, सभी कुछ पा सकते हैं।** अतः किसी विशेष स्थान पर बैठकर विशिष्ट दिखाई देना आवश्यक नहीं है। दिखने में क्या

है, उससे क्या मिलता है? भीड़ में खो जाना, प्रेम के सागर में खो जाना ही मुख्य चीज़ है। ये मात्र मिथक है कि किसी भी तरह से हमें सबसे आगे स्थान प्राप्त कर लेना चाहिए। मराठी में कहते हैं, ... अर्थात मैने सबसे आगे स्थान प्राप्त कर लिया है। **आगे का स्थान पीछे का हो जाएगा और पीछे का आगे।** आश्चर्य की बात है कि अब भी लोग इतनी मूर्खतापूर्ण चीज प्राप्त करने के प्रयत्न करते हैं! आपका मस्तिष्क कहाँ है, आपका चित्त कहाँ है, आप क्या सोच रहे हैं? आप यदि निर्विचार हैं तो आप सन्तुष्ट होंगे, प्रसन्न होंगे और कुछ न मांगेंगे। आपको किसी चीज़ की आवश्यकता न रहेगी। पाने को क्या है? इतना महत्वपूर्ण क्या है? ये सभी विचार अज्ञान के कारण आते हैं। मैं अवश्य आपको बताऊंगी ये अज्ञान के कारण आते हैं। एक बार हरे रामा–हरे कृष्णा वाला एक आदमी मेरे पास आया और कहने लगा हमने सुना है कि आप महान सन्त हैं, ये, वो। परन्तु आपके पास जीवन की सभी सुख–सुविधाएं हैं, यहाँ पर सभी कुछ बहुत शानदार है। तो किस प्रकार आप सन्त हैं? "मैंने अपना परिवार त्यागा है, कारें त्यागी हैं, घर त्यागा है, और अपने बच्चे त्याग दिए हैं।" मैंने कहा, एक अन्य चीज़ जो तुमने त्याग दी है वह है तुम्हारा मस्तिष्क। कहने लगे कि आप कैसे कहती हैं कि हमने अपनी बुद्धि त्याग दी है? मैंने कहा, "बहुत साधारण बात है।" मैंने किसी चीज़ को पकड़ा ही नहीं, इसलिए मैंने किस चीज़ को त्यागा ही नहीं। जब आपने किसी चीज़ को पकड़ा ही न हो तो त्यागना क्या है? अब मैं कहूंगी कि इस घर में या मेरे शरीर पर, कहीं भी, यदि आप सोचते हैं कि आपको श्रीकृष्ण के धूल के एक कण के बराबर भी कोई चीज़ है तो आप इसे ले जा सकते हैं। परन्तु यह श्रीकृष्ण के धूल के एक कण के समान होनी चाहिए। वे लगे इधर–उधर देखने! मैंने कहा, "तो आपने क्या त्याग किया है? केवल पत्थर? आपने क्या त्याग किया है? ये त्याग दिया, वो त्याग दिया, क्यों आप शेखी बघार रहे हैं? फिर सिर मुंडवाना! ये क्या है?

ये सभी बेकार की बाते हैं कि हमने ये किया है, हमने वो किया है। **सहजयोग में कोई व्यक्ति यदि सोचता है कि वह सहजयोग के लिए बहुत कार्य कर रहा है तो उसे चाहिए कि सहजयोग का काम बिल्कुल छोड़ दे। अज्ञान का यह एक अन्य चिन्ह है। आप यदि सागर के अंग-प्रत्यंग हैं तो सभी कुछ सागर कर रहा है आप कुछ नहीं कर रहे।** आपके अन्दर ऐसे विचारों का होना ये दर्शाता है कि अपने विषय में आपको कितना कम ज्ञान है! आप सागर है और यदि आप सागर हैं तो किस प्रकार दावा कर सकते हैं कि मैंने इस तट का स्पर्श किया है उस तट को स्पर्श किया है? अब तो "मैं" बची ही नहीं। एक बार जब ये "मैं" छूट जाती है तो केवल आपके अन्दर का शाश्वत अस्तित्व चमक उठता है। हमारे चरित्र में ये सारी चीजें स्पष्ट दिखाई देती है। कुछ लोग बहुत अधिक लिप्त है, अपने देश से, अपनी पूजा विधि से आदि–आदि। ये सभी मोह त्यागने होंगे। लोग इतने बन्धन ग्रस्त हैं कि उनके लिए ऐसा कर पाना अत्यन्त कठिन है। जब तक आपके बन्धन बने रहेंगे तब तक आप अपने मन से ऊपर नहीं उठ सकते–मन जो मिथ्या है। आप ऐसा नहीं कर सकते।

अब ये समझने का प्रयत्न करें कि आपके बन्धन क्या हैं? एक बन्धन, जिसे देखकर मैं बहुत हैरान हुई थी, ये है कि आप पश्चिमी देशों में जाएं तो लोग केवल श्रीगणेश के ही भजन गाते हैं। श्री गणेश के सारे भजन उन्हें याद हैं, उनके सभी

फोटो उनके पास हैं, श्री गणेश का सभी कुछ, बच्चों के पास भी है। और मैंने देखा है कि उनकी चैतन्य लहरियाँ रूक गई हैं। चैतन्य लहरियाँ क्या रुकनी चाहिएं? श्रीगणेश क्यों चैतन्य लहरियाँ रोकेंगे? मैंने इसका कारण महसूस किया, कि क्यों ऐसा हो रहा है, क्योंकि एक बार मैंने कहा था कि ईसा–मसीह श्रीगणेश के ही अवतार हैं। सूक्ष्म रूप से उनका सम्बन्ध केवल ईसा–मसीह और ईसाई धर्म है। कल्पना करें श्रीगणेश का जो संगीत हमने पूर्वी ब्लाक के देशों में सुना था और उससे चैतन्य–लहरियाँ रुक जाएं! वो सभी भजन केवल श्रीगणेश के गा रहे थे, सहजयोग का एक भी भजन नहीं गा रहे थे। गुरु की तो बात ही छोड़ दीजिए, एक बार भी नहीं। तो वहाँ भी सूक्ष्म लिप्सा है।..... मैं एक व्यक्ति है, वो लोग स्वतन्त्र नहीं हैं क्योंकि सभी कलाकारों की एक विशेष शैली होती है। यदि यह रैमब्रैंड (Rambrandt) शैली है तो यही है, यदि यह लिओनार्डो (Leonardo) शैली है तो वही शैली है। ये लोग यद्यपि जन्मजात आत्म साक्षात्कारी हैं फिर भी उनकी एक ही शैली है। ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जो आज इस प्रकार बनाएगा और कल उस प्रकार। स्वतन्त्रता बिल्कुल नहीं है। अपनी शैलियों से वे बंधे हुए हैं। सभी की एक ही शैली है और उसी का वे अनुसरण करते हैं। क्या कारण है? कारण ये है कि अधिकतर ने तीन या चार शैलियाँ सीखी होंगी, परन्तु लोगों ने इन्हें अस्वीकार कर दिया होगा, ये अच्छी नहीं है, ये बेकार है। तो यह सब लोगों की राय है। इस प्रकार उन्होंने केवल एक शैली अपना ली कि 'यही शैली ठीक है'।

आप ईसा–मसीह को देख सकते हैं, यदि ये जापानी हैं तो इसकी छोटी–छोटी आँखें होंगी, यदि ये चीनी हैं तो इसकी पिचकी हुई नाक होगी, यदि ये भारतीय है तो इसका रंग सांवला होगा। सभी प्रकार के ईसा–मसीह मैंने देखे हैं और मैं सोचती हूँ कि किस प्रकार ये ईसा–मसीह चैतन्य लहरियाँ प्रवाहित कर सकते हैं? मेरे फोटोग्राफ से किस प्रकार आप इनकी तुलना कर सकते हैं? कैमरे भी इसी समय विकसित होने थे। क्या आप इस बात को समझ पाए हैं! कैमरे भी इसी समय बने इससे पहले नहीं। लाऊडस्पीकर भी अभी बना इससे पहले नहीं। हवाई जहाज भी इससे पूर्व नहीं बने। मैं 19 दिनों तक यात्रा करती रही, एक दिन हवाई–जहाज में और दूसरे दिन सार्वजनिक कार्यक्रम में। वे ऐसा कुछ नहीं कर सके। कोई भी इस प्रकार नहीं कर सकता, न तो श्रीकृष्ण, न ही कोई और। उन दिनों में लोग हवाई जहाज से नहीं उड सकते थे। अब हम लोग कहते हैं कि हम 65 देशों में हैं। कोई कहता है 68 देशों में है। ये संख्या बढ़ती ही चली जा रही है। परन्तु ऐसा होना अभी सम्भव हुआ है क्योंकि आज हवाई जहाज उपलब्ध हैं। इससे पहले ये कभी न थे। तो ये सभी चीजें, वीडियो या जिस प्रकार से आप मेरी फोटो देखते हैं क्या ये इससे पूर्व कभी उपलब्ध थे? नहीं। अतः ये अत्यन्त विशेष समय है जिसमें विज्ञान ने भी साधकों को खोज करने में सहायता की है। विज्ञान ने यह कार्य किया है हमें इसका कृतज्ञ होना होगा, क्योंकि विज्ञान का एक भाग बहुत अधिक सहायक रहा है। पहले कारें भी नहीं होती थी। मैं मिलानो नहीं जा पाती। बैलगाडी पर जाने की कल्पना करें, मेरा क्या हाल हुआ होता? तो ये सभी चीजें आज आपके लिए बनाई गई हैं। विशेष कारणों से आप भी इसी समय जन्मे हैं।

ये अवतरण आत्म–साक्षात्कार नहीं दे सके क्योंकि उस समय आप लोग नहीं थे। आपकी योग्यता वाले बहुत कम लोग थे। मुझे संदेह है कि

आप अपनी योग्यता को समझते भी हैं! जिस प्रकार से आप कभी–कभी बढ़ते हैं, उससे पता चलता है कि आपको अपने क्षेम का ज्ञान नहीं है। आप नहीं जानते कि आप क्या है, सारा वातावरण कितना कार्यान्वित है! विज्ञान ने भी कार्य किया है। विज्ञान प्रकृति की देन है। ये सब आप लोगों पर कार्यान्वित किया गया है ताकि आप कम से कम समय में उच्चतम अवस्था प्राप्त कर सकें। परन्तु इसके लिए आपको अत्यन्त अन्तर्वलोकन करने वाला होना होगा। अन्तर्वलोकन आपकी सहायता करेगा और आप वास्तव में महान गुरु बन जाएंगे। जब आप अन्य गाँवों में, अन्य स्थानों पर, अन्य नगरों में जाएंगे तो आपको देखकर ही लोगों को समझ जाना चाहिए कि कोई महान लोग आ गए हैं। आपको कुछ नहीं बताना, कुछ प्रमाणित नहीं करना, आपके स्वभाव की सहजता ही सभी कार्य करेगी। पहली बार जब मैं लेनिनग्रैड (Leningrad) गई तो कोई भी मेरे विषय में कुछ न जानता था, कोई विज्ञापन नहीं हुए, कुछ नहीं। वहाँ केवल थोड़े से पोस्टर लगाए गए थे। फिर भी दो हजार लोग हॉल के अन्दर थे और दो हजार हॉल के बाहर तथा दो हजार लोग और आए, अधिकतर लोग जमीन पर बैठे हुए थे। मैं हैरान थी! मैंने कहा, "किस प्रकार आप मेरे कार्यक्रम में आए?" उन्होंने कहा, "श्रीमाताजी स्पष्ट है, आपके फोटोग्राफ से!" वहाँ पर वैज्ञानिक थे, डॉक्टर थे, और सभी प्रकार के बुद्धिजीवी लोग थे। सभी ने चेहरे से आध्यात्मिकता का अहसास किया। हमारे अन्दर भी ऐसी ही संवेदना होनी चाहिए, तब आपको विवेक की आवश्यकता नहीं रहेगी। कुछ नहीं। क्योंकि आप जानते हैं ये ऐसा है, ये ऐसा है, ये ऐसा है! न तो आपको अन्दाजे लगाने पडेंगे, न ही आपको सोचना पड़ेगा। ये नहीं कह सकते कि "इसके लिए कौन सबसे अधिक उपयुक्त होगा, जो पहली बार आए हैं, जो उसके बाद आए या जो आगे आएंगे, युवा या वृद्ध, महिलाएं, पुरुष या बच्चे?" ऐसा ही है। काश कि मैं अपने जीवन काल में आपमें से बहुत से लोगों को इतना परिवर्तित, इतने सुन्दर रूप में, इतना अच्छा, इतना महान और इतने अच्छे वातावरण में देख सकूं! मेरे लिए यह बहुत बड़ा संतोष है और कई बार तो मैं सोचती हूँ कि अब करने को कुछ बाकी नहीं है, सब कार्य हो गया है। परन्तु, ये लोग कभी यहाँ आमन्त्रित करते हैं कभी वहाँ। लोग ऐसा करते हैं परन्तु सच्चाई ये है कि मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ। आपने जब पेड़ लगा दिया है, ये आम के पेड़ जैसा है। आम के पेड़ को यदि एक बार लगा दिया जाए और तीन चार वर्ष उसकी देखभाल कर ली जाए तो बाद में यह अपनी देखभाल स्वयं करता है। इसी प्रकार से आपके साथ भी घटित होना चाहिए। आपको स्वयं ही उन्नत होना चाहिए। निःसन्देह हमें ऐसे लोग भी मिलेंगे जो मूर्ख हैं, आक्रामक हैं और जो बिल्कुल भी सहजयोगी नहीं हैं, फिर भी सहजयोगी बनने का प्रयत्न कर रहे हैं। सभी प्रकार के लोग मिलते हैं, आप बस उन्हें देखते रहिए केवल इतना ही।

इस गुरु पूजा में आपने निर्णय करना है कि मापदण्ड क्या हैं। पहली बात तो ये है कि गुरु को निरीच्छ होना चाहिए, किसी भी प्रकार की कोई इच्छा नहीं, पूर्णतः निरीच्छ। भारत में एक कुगुरु है जिन्होंने कहा कि 'यदि मेरे पास वो शक्तियाँ होतीं जो श्रीमाताजी के पास हैं तो मैं विश्व सम्राट बन गया होता!" लोगों ने कहा, "तो आप बन क्यों नहीं जाते?" वह कहने लगा, "माँ ऐसी क्यों नहीं बन जातीं? वो साम्राज्ञी क्यों नहीं बन जातीं?" लोगों ने कहा, "क्योंकि वे निरीच्छ हैं अर्थात उनमें कोई इच्छा नहीं है। इच्छा विहीन व्यक्ति कुछ भी नहीं बनेगा। तो मैंने कहा कि जाकर उसे बता दो कि

जब तक तुम्हारे अन्दर इच्छाएं हैं तुम शक्तियाँ भी प्राप्त नहीं कर सकते। वे क्योंकि निरीच्छ हैं इसीलिए उनमें ये सारी शक्तियाँ हैं। अतः जब भी आपके मस्तिष्क में कोई इच्छा हो तो आपको कहना चाहिए, **"मैं ये प्राप्त नहीं करना चाहता। इसे भूल जाएं। इच्छा जब भी आप पर हावी होने लगे तो तुरन्त अपने चित्त को दूसरी ओर ले जाएं। कोई भी तुच्छ इच्छा आप पर नियंत्रण कर सकती है और केवल निर्विचार चेतना में जाने से ही आप निरीच्छ बन सकते हैं। जब भी कोई समस्या आए अपनी निर्विचार चेतना की अवस्था में चले जाने की योग्यता होनी चाहिए। बस शान्त हो जाएं। अपनी इच्छाओं को शान्तिपूर्वक देखें और उन्हें बताएं, "मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ, अब मत आओ। मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार से आप निरीच्छ बन सकते हैं।**

फिर करुणा है और वास्तव में करुणा ही शक्ति बन जाती है। छोटी–छोटी चीज़ों में आप अपने प्रेम की अभिव्यक्ति कर सकते हैं, छोटी–छोटी चीज़ों में। और अत्यन्त मधुरतापूर्वक आप अपने प्रेम की अभिव्यक्ति कर सकते हैं। ये अत्यन्त महत्वपूर्ण है आज पूरे विश्व को प्रेम एवं शान्ति की आवश्यकता है और जहाँ तक हो सके हमें सभी को यह प्रेम एवं शान्ति देनी है। सहजयोगियों को देना बहुत आसान है। परन्तु उन लोगों को भी प्रेम और शान्ति देनी है जो सहजयोगी नहीं है। हमें चाहिए कि उनसे प्रेम एवं सम्मान पूर्वक व्यवहार करें। परन्तु आपमें ये इच्छा नहीं होनी चाहिए कि इसके बदले उनसे हमें कोई आशा नहीं करनी है। उनके लिए जो कर दिया है बस ठीक है। आप ऐसे बहुत से सहजयोगियों को जानते हैं जो सहजयोग में आए, बहुत कुछ प्राप्त किया, फिर भी हमें धोखा दिया। कोई बात नहीं, ये कोई अहम बात नही है क्योंकि उन्हें ही नुकसान होगा मुझे नहीं। अतः इन चीजों की चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

एक अन्य चीज ये है कि ये देखने का प्रयत्न करें कि आपका मस्तिष्क प्रतिक्रिया न करे। कुछ लोगों की प्रतिक्रिया करने की आदत है, या मैं कहूंगी कि अधिकतर की। आप इन्हें कुछ बताएं और वे अपनी भी एक पूँछ इसमें डाल देंगे। किसी अन्य की कही हुई बात को वे कभी स्वीकार नहीं करेंगे। आप यदि प्रतिक्रिया कर रहे हैं तो आपके मस्तिष्क में क्या जाएगा, आपके हृदय में क्या जाएगा, और आपके चित्त में क्या जाएगा? अतः प्रतिक्रिया यह दर्शाती है कि आप का ठीक से विकास नहीं हुआ। जो चित्त आपके मस्तिष्क, शरीर तथा सर्वत्र जाने का प्रयत्न करता है वह वहाँ नहीं जा पाता। वह वहाँ पर प्रवेश नहीं कर पाता, क्योंकि ज्योंही ये प्रवेश करने का प्रयत्न करता है तो प्रतिक्रिया द्वारा आप इसे रोक देते हैं। केवल देखने के लिए आप किसी चीज़ को नहीं देख सकते। आपको तो प्रतिक्रिया करनी ही है। ये बात अच्छी नहीं है, बिल्कुल अच्छी नहीं है। मैं यदि कहती हूँ कि पाँच बजे हैं तो आप कहते हैं कि पाँच बजकर दो मिनट तीन सैकेण्ड हुए हैं! ये संस्कार भयानक बन्धनों के कारण आते हैं। इन बन्धनों को जाना होगा। 'प्रतिक्रिया नहीं करनी। किसलिए आपको प्रतिक्रिया करनी चाहिए? फिर बहस शुरू हो जाती है, झगड़े शुरू हो जाते हैं, गालीगलोंच होती है।' अपने मस्तिष्क से यदि आप कह दें, 'बिल्कुल कुछ नहीं, तुम मिथ्या हो और मैं किसी चीज़ के प्रति प्रतिक्रिया करने वाला नहीं हूँ, तो 99.9% समस्याओं का समाधान हो जाएगा।

और अन्त में 'अहं' आता है। सन्त में अहं

का होना मेरी समझ से परे है। मैं इसे समझ ही नहीं सकती। अहं होना अत्यन्त मूर्खता है। ये तो एक प्रकार का नियंत्रण है। छोटी सी चीज़ बिगड़ने पर भी आप नाराज़ हो जाते हैं, कोई यदि कुछ कहता है तो आप नाराज हो जाते हैं। इसका अर्थ ये है कि प्रेम एवं करुणा की आपकी शक्ति पूर्ण नहीं है। आवश्यकता पड़ने पर निःसन्देह आप लोगों को सुधार सकते हैं, परन्तु इसके लिए आपके अन्दर ये शक्ति होनी चाहिए। जिस व्यक्ति को आप सुधार रहे हैं उसकी समझ में आना चाहिए कि प्रेम के कारण आप ऐसा कर रहे हैं , स्वार्थ एवं अपने लाभ के लिए नहीं। परन्तु यह अहं बहुत बड़ी समस्या है। ये आपमें जाग जाता है और आपको अक्खड़ एवं भयानक बना देता है। परन्तु यदि आप विनम्र हैं, सच्चाई में, व्यापारियों की तरह से विनम्र नहीं, अपने अन्दर से, अपने हृदय से यदि आप विनम्र हैं, विनम्रता का आनन्द लेते हैं तो यह अहं दूर हो सकता है। अब आपने स्वयं से प्रश्न पूछना है कि किस कारण से मैं नाराज हूँ? पुनः मैं उसी बिन्दु पर आ गई हूँ, 'अन्तर्वलोकन', क्योंकि यहाँ पर आप कोई कार्य करने के लिए नहीं आए, सन्त बनने के लिए आए हैं। ये अहं प्रेम एवं करुणा का शक्तिशाली यन्त्र बनाया जाना चाहिए। आप इस कार्य को कर सकते हैं, ये कठिन नहीं है। 'अहं' क्या है? चीज़ों के प्रति प्रतिक्रिया। किसी भी चीज के प्रति आप अत्यन्त मधुरता पूर्वक प्रतिक्रिया कर सकते हैं और अत्यन्त विनाशकारी ढंग से भी। तब विनोदशीलता आती है। आपको इस प्रकार बोलना चाहिए मानो सुगन्धित फूलों की कलियाँ खिल रही हों। तब आपकी सभी गतिविधियाँ मधुर एवं सुकोमल बन जाएंगी। अहं अत्यन्त कोमल, अच्छा, मधुर, क्षमाशील एवं प्रेममय होना चाहिए। आइए ऐसा अहं प्राप्त करें, ऐसे अहं से शुरुआत करें। विपरीत दिशा से, और हमें हैरानी होगी कि किस प्रकार हम वास्तव में विश्व पर विजय प्राप्त करते हैं!

गुरु पूजा के इस दिन, गुरु से आशा की जाती है कि वह शिष्यों को कुछ ऐसा बताए जिससे उनका सुधार हो। अपने मधुर ढंग से मैंने आपको जो भी कहा है उसका आप बुरा न माने। किसी भी प्रकार से मेरा अभिप्राय आपकी भर्त्सना करना नहीं है, आपको अन्तर्वलोकन का उपयुक्त विवेक प्रदान करना है, अन्तर्वलोकन का उपयुक्त विवेक जिससे आप सब गुरु पद प्राप्त कर सकें। मेरी एक मात्र, मुझे 'इच्छा' नहीं कहना चाहिए क्योंकि इच्छा तो मुझमें है ही नहीं, तो मेरा एकमात्र स्वप्न ये है कि मैं सभी योगियों को प्रेम की शक्ति में डूबे हुए, एक दूसरे के प्रेम का आनन्द लेते हुए, पारस्परिक सम्बन्धों का आनन्द लेते हुए, और पारस्परिक सम्बन्धों को सुधारते हुए देखूं। मैं जानती हूँ कि समस्याएँ खड़ी करने वाले लोग भी हैं, मैं जानती हूँ वे समस्याएँ खड़ी करते हैं। परन्तु यदि आप समस्याओं का समाधान नहीं कर सकते तो आपके गुरु बनने का क्या लाभ है? अतः मैं आप पर छोड़ती हूँ कि जिन समस्याओं का आप सब सामना कर रहे हैं, उनका स्वयं समाधान करें, प्रेम एवं करुणापूर्वक अन्तर्वलोकन करके, अपनी भर्त्सना द्वारा नहीं। मुझे विश्वास है कि आप इस कार्य को कर सकते हैं।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

सभी पूजाओं में मैं मेजबान देशों को, सभी पुरुषों, सभी महिलाओं तथा अगुआओं को उपहार देती हूँ। परन्तु मुझे खेद है कि गुरु पूजा पर मेरा किसी को भी उपहार देना उचित नहीं समझा जाता। केवल गुरु ने ही आपसे सभी कुछ छीनना होता है। (हँसी......) ये सभी कुछ साड़ियाँ आदि जो मुझे दी जाती हैं केवल गुरु पूजा पर ही दिया

जाना चाहिए। परन्तु मुझे खेद है कि मैं आज किसी भी अगुआ को या किसी अन्य को कुछ नहीं दे सकती। आशा है आप लोग बुरा नहीं मानेंगे। एक माँ के लिए गुरु बनना बहुत कठिन कार्य है क्योंकि गुरु तो अत्यन्त कठोर अनुशासनप्रिय होते हैं। वे हमेशा शिष्यों को अनुशासित करने का प्रयत्न करते हैं और उनके प्रति अत्यन्त कठोर व्यवहार करते हैं। परन्तु एक माँ इतनी कठोर नहीं हो सकती। माँ–गुरु के साथ ये समस्या होती है। ये भी एक कारण हो सकता है कि कभी–कभी लोग सहजयोग को स्वीकृत रूप से ले लेते हैं। आपको ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि आपको आत्म–साक्षात्कार प्राप्त हो गया है। आप आत्म साक्षात्कारी हैं आप गुरु हैं। आपको अपनी उत्क्रान्ति की चिन्ता करनी चाहिए। मुझे आपको ये बताने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि आपको ऐसा करना है। आपको वैसा, क्योंकि आपके हाथों में प्रकाश है और आप इस कार्य को भली–भांति कर सकते हैं। आशा है कि आज का प्रवचन आपको बहुत पसन्द आया होगा और यदि मेरी कही हुई किसी बात से आपको परेशानी हुई हो तो आप उसका बुरा नहीं मानेंगे। परन्तु व्यक्ति को ये सब देखना है क्योंकि आप सबने अन्दर और बाहर दोनों ओर उन्नत होना है, और सहजयोग को सर्वत्र फैलाना है। अतः चाहे आप पुरुष हों या महिला, आपने देखना है कि आपने कितने लोगों को आत्म–साक्षात्कार दिया। विश्व भर में आत्म–साक्षात्कार का कार्य आरम्भ करना आवश्यक है। इसी प्रकार से सहजयोग फैलेगा और जिस प्रकार मैं आजकल यात्रा कर रही हूँ, फिर मुझे वैसे यात्रा करने की आवश्यकता न रहेगी। सब लोग इस बात की जिम्मेदारी लें कि कम से कम अपने नगरों और कार्य स्थानों के क्षेत्र में यात्रा करें। खुलकर आप सहजयोग की बात करना आरम्भ करें। सभी आशीर्वाद, सभी शक्तियाँ आपके साथ हैं। किसी को यदि कोई कठिनाई आए तो बन्धन देकर चीज़ों को ठीक कर लें। ऐसा करना आप अच्छी तरह से जानते हैं, सहजयोग की हर चीज़ का ज्ञान आपको है, इसके बारे में कुछ बताने की मुझे आवश्यकता नहीं है आवश्यकता तो केवल उपयोग करने की है। चाहे आपके पास सभी यन्त्र हों, परन्तु इनका उपयोग किए बिना कोई कार्य न होगा। पूर्ण प्रेम एवं आशीर्वाद के साथ अब मैं आपको अलविदा कहती हूँ।

धन्यवाद।

गुरु स्तुति

परम पूज्य श्री माताजी के श्री चरणों में अर्पित

ज्ञानेश्वरी के अध्याय 12 से 18 पर आधारित

1. हे, गुरु माँ (गुरु मौली) आपको कोटि–कोटि प्रणाम। अपने बच्चों पर निर्मल एवं शाश्वत आनन्द, निरानन्द की उदारतापूर्वक वर्षा करने के लिए आप सर्वत्र विख्यात हैं।

2. हे, गुरु माँ, हे करुणामयी, वासनारूपी सर्प अपने शिकंजे में कसकर जब हमें डसता है तो उसका ज़हर हमारी चेतना का हरण कर लेता है। वासना रूपी इस सर्प के ज़हर को उतारना भी बहुत कठिन कार्य है। परन्तु हे प्रेममयी माँ, आपके एक कटाक्ष मात्र से यह ज़हर लुप्त हो जाता है तथा चेतना पुनर्जागृत हो उठती है।

3. हे, परमप्रिय गुरु, श्री माताजी, अत्यन्त कृपा कर आपने अमृत का सागर हमें प्रदान किया है। सांसारिक जीवन की तपन किस प्रकार हमें कष्ट दे सकती है और किस प्रकार इसके दुख हम पर विजयी हो सकते हैं?

4. हे परम प्रिय गुरु, केवल आपकी कृपा के कारण ही आपके बच्चे योग के आशीष का शाश्वत् आनन्द उठा रहे हैं। आप ही अत्यन्त प्रेमपर्वूक हम पर 'सोहं' (मैं वही हूँ) की आशीष वर्षा कर रही हैं।

5. हे माँ, अपने ह्रदय के झूले में, अपनी गोद में, अपनी पोषक शक्ति द्वारा आप प्रेमपूर्वक अपने बच्चों का लालन पालन करती हैं और उन्हें योगनिद्रा में सुलाती हैं।

6. श्री माताजी, आप हमें आरती का वरदान देती हैं, आत्मा जिसकी लपट है, और खेलने के लिए मनःशक्ति तथा प्राणशक्ति रूपी दो खिलौने प्रदान करती हैं। तथा, हे माँ, आध्यात्मिक आशीष के गहनों से हमारा शृंगार करती हैं।

7. हे गुरु मौली (गुरु माँ), अपने अमृत का भोजन आप हमें प्रदान करती हैं और 'सोहं' 'हंसा' के अनहद् नाद की लोरी गाकर हमारी आत्मा को ज्योतिर्मय करके हमें योगनिद्रा में सुलाती हैं।

8. हे श्रीमाताजी, हे गुरुमूर्ति, आप ही सभी साधकों की माँ हैं। सारी विद्या का उद्भव आपके चरण कमलों से होता है। कृपा करके वर दें कि हम आपके चरण कमलों की छाया में सदा–सर्वदा बने रहें।

9. श्रीमाताजी अपनी करुणा का आश्रय जब आप हमें प्रदान करती हैं तो हम दिव्य ज्ञान (शुद्ध विद्या) में पारंगत हो जाते हैं।

10. हे गुरु, श्री माताजी, आपको कोटि–कोटि प्रणाम। आपके चरण कमलों की छत्रछाया में ही शुद्ध विद्या पनपती है। श्रीमाताजी निःसन्देह आपके चरण कमल ही हमारी आत्मा हैं।

11. श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम। आपका स्मरण मात्र हमें शब्दों के अथाह सागर पर आधिपत्य प्रदान करता है अर्थात अपनी सूक्ष्म भावनाओं को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने की शक्ति हमें प्राप्त हो जाती है और हमारी जिह्वा से दिव्य ज्ञान (शुद्ध विद्या) बहने लगती है।

12. श्रीमाता जी आपको कोटि कोटि प्रणाम। आपके स्मरण मात्र से व्यक्ति की वाणी इतनी मधुर हो जाती है कि माधुर्य, अमृत तथा सभी रस विनम्र होकर शब्दों के माध्यम से तुरन्त अभिव्यक्त हो जाते हैं।

13. श्रीमाताजी आपको कोटि कोटि प्रणाम। आपकी अनुकम्पा से आपके बच्चों को ऐसे शब्द

सूझते हैं जो आत्मा से उदित होने वाले गहन अनुभव तथा सूक्ष्म रहस्यों को अभिव्यक्त करते हैं।

14. श्रीमाताजी हमारे हृदय जब आपके चरण कमलों में होते हैं तो सौभाग्यश्री, दिव्य ज्ञान तथा साक्षात्कार की कृपा हम पर होती है। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

15. श्रीमाताजी आप सर्वदेवों में महान् हैं। दिव्य ज्ञान का प्रकाश (प्रज्ञा) प्रदान करने वाले सूर्य आप ही हैं। आप ही की कृपा से आपके बच्चे (साधक) निरानन्द रूपी जीवन आनन्द प्राप्त कर सके। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

16. श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम। आप ही वह वट वृक्ष हैं जिसकी छाया में आपके बच्चे सुख और सुरक्षा का अनुभव करते हैं। अपने बच्चों के हृदय में आप ही 'सोहं' का सूक्ष्म रहस्य प्रकट करती हैं। आप ही वह सागर है जिसमें तीनों लोक प्रकट तथा लुप्त होते हैं।

17. श्रीमाता जी कष्ट में फँसे अपने बच्चों की रक्षा करने में आप देर नहीं करतीं। आप करुणा का अनन्त सागर हैं। सारा दिव्य ज्ञान आपका अभिन्न मित्र है। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

18. श्रीमाता जी आपकी माया की लीला में जब हम लिप्त होते हैं तो हमें लगता है कि यह संसार सत्य है। परन्तु जब आप अपना ब्रह्म रूप प्रकट करती हैं अर्थात् सर्वशक्तिमान परमात्मा का सच्चा रूप, तो हमें इस बात का ज्ञान होता है कि श्रीमाताजी आप ही सर्वव्याप्त हैं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

19. श्रीमाताजी जादूगर जब दर्शकों पर अपने जादू का सम्मोहन डालता है तो दर्शक पूरे विश्व को भूल जाते हैं। परन्तु जादूगर स्वयं को छुपा नहीं सकता। परन्तु श्रीमाताजी आपकी माया का जादू आपके विषय में सत्य की चेतना को लुप्त कर देता है और व्यक्ति भ्रान्तिमय संसार को सत्य मान लेता है। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

20. श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम। केवल आप ही संसार के ज़र्रे–ज़र्रे में व्याप्त हैं। सहजयोगियों तथा आत्म साक्षात्कारी लोगों में आप अपने ब्रह्म रूप में प्रकट होती हैं। ब्रह्मरूप में प्रकट होकर उन्हें अन्तरप्रकाश प्रदान करती हैं। परन्तु माया में लिप्त लोग आपके विषय में नहीं जान पाते। श्रीमाताजी आपसे सम्बन्धित आपकी यह लीला अत्यन्त अद्‌भुत है।

21. श्रीमाताजी आप ही की शक्ति जल को तरलता तथा पृथ्वी माँ को क्षमा का गुण प्रदान करती है। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

22. श्रीमाताजी त्रिलोकी में आप ही की शक्ति सूर्य तथा चन्द्र की तरह चमकती है। बिना आपकी शक्ति के वे मोती को जन्म देने वाली सीप के खोल सम होते। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

23. श्रीमाताजी आप ही की शक्ति के कारण पवन स्वतंत्रता पूर्वक कहीं भी बहती है तथा सर्वव्याप्त प्रतीत होने वाला गगन आपके ब्रह्माण्डीय अस्तित्व का मात्र नन्हा सा भाग है जिसे वैसे ही खोजना पड़ता जैसे लुका छिपी खेल में छिपे हुए व्यक्ति को। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

24. श्रीमाताजी केवल इतना ही नहीं है। माया भी आपके विराट रूप का एक नन्हा सा अंश है

और अन्तर प्रकाश का उद्भव भी आप ही की शक्ति के कारण है। श्रुतियों (वेदों) ने आपके रूप का वर्णन करने का निरर्थक प्रयास किया परन्तु आपके रूप को समझ न पाईं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

25. श्रीमाताजी परमात्मा के स्वरूप का वर्णन करने में वेदों को दक्ष माना जाता था। परन्तु ये दक्षता तभी तक सीमित थी जब तक उन्होंने आपके ब्रह्म–रूप का अवलोकन नहीं किया। आपके पावन स्वरूप का वर्णन आरम्भ करते ही वेद बिल्कुल वैसे ही शान्त हो जाते हैं जिस प्रकार हम आपके ध्यान की स्थिति में होते हैं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

26. श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम। हम, आपके सभी बच्चों ने अपने हृदय शुद्ध कर लिए हैं। कृपा करके अपने चरण कमल हमारे हृदय में विराजित करें। अपने हृदय में, श्रीमाताजी, हम आपके चरण कमलों की पूजा करना चाहते हैं।

27. श्रीमाताजी तदात्म्य भाव हमारी युग–हस्तांजलि सम है जिससे हम कलियाँ निकालकर आपके चरण कमलों में अर्पण करते हैं। हमारी नाड़ियाँ चक्र तथा इन्द्रियाँ ही ये कलियाँ हैं। इन्हें हम आपके चरण कमलों में समर्पित करते हैं। आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

28. श्रीमाताजी अनन्य भाव से (पूर्ण समर्पण भाव से) हम आपके चरण कमल धोते हैं और उन पर अपनी अनामिका (Ring Finger) से समर्पण का चन्दन लगाते हैं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

29. श्रीमाताजी आपके प्रति हमारा प्रेम स्वर्ण की तरह से है। कृपा करें कि हम इस स्वर्ण को पवित्र करके इसकी पाजेबें बनाकर इन्हें आपके चरणों में पहना सकें।

30. श्रीमाताजी कृपा करें कि अपने प्रेम के शुद्ध स्वर्ण में अंगूठियाँ बनवाकर हम आपकी पादांगुलियों में पहनाएं।

31. श्रीमाताजी, आनन्द सुगन्ध से परिपूर्ण सत्व गुण रूपी पुष्प हम आपके चरण कमलों में अर्पित करते हैं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

32. श्रीमाताजी, अपने अहं की अगरबत्ती जलाकर हम 'न अहं' की भावना की ज्योति से आपके चरण कमलों की आरती उतारते हैं। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

33. श्रीमाताजी हमारा शरीर और प्राण पादुकाओं का जोड़ा है। कृपा करके इसे अपने चरण कमलों में धारण कीजिए। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

34. श्रीमाताजी कृपा करें कि आपके चरण कमलों में ये पूजा, जो आपके बच्चे कर रहे हैं, सभी कमियों के बावजूद भी पूर्ण हो और आप इसे स्वीकार करें।

35. श्रीमाताजी अपनी पूजा का ये अवसर आपने हमें प्रदान किया, इसके लिए हम आपके सभी बच्चे अखण्ड आभारी हैं। हमारे जीवन से दुःख समाप्त हो गए हैं, पाप क्या होता है ये हम भूल गए हैं और दारिद्रय का अस्तित्व समाप्त हो गया है। आपके पावन दर्शन करके जीवन की पूर्णता का आनन्द हमें प्राप्त हो गया है। श्रीमाताजी आपको कोटि–कोटि प्रणाम।

श्रीकृष्ण पूजा

जिनेवा 28-8-1983

(परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का प्रवचन)

आज इस पावन भूमि पर हम श्रीकृष्ण का जन्म–दिवस मना रहे हैं। श्रीकृष्ण पितृत्व (Fatherhood) की पराकाष्ठा है, ये बात मैं पहले भी वर्णन कर चुकी हूँ। पृथ्वी पर अवतरित होकर उन्होंने इस पराकाष्ठा का उदाहरण दिया। अतः श्री कृष्ण–चेतना पृथ्वी पर पितृ–धर्म का उच्चतम उदाहरण है। परन्तु परमात्मा के साम्राज्य में, हम कह सकते हैं, स्वर्ग में या सबसे ऊपर सदाशिव का स्थान है जो कभी अवतरित नहीं होते (सदा शिव हैं)। श्रीकृष्ण उनके भिन्न पक्षों में से एक हैं। सदा शिव पिता हैं और श्रीकृष्ण उनके पक्षों में से एक पक्ष है और आदिशक्ति या परम चैतन्य इसी आदिशक्ति का एक अन्य अंश हैं, आदिशक्ति जो राधा रूप में पृथ्वी पर अवतरित हुई। ईसा–मसीह की माँ के रूप में अवतरित होने वाली भी वही हैं। श्रीकृष्ण के नाम पर ही उन्होंने ईसा–मसीह का नामकरण किया (ख्रिस्त), मानो यह भी श्रीकृष्ण का ही नाम हो, श्रीकृष्णा' से। भारतीय भाषा में इसे ख्रिस्त कहते हैं। पहले भी मैंने आपको बताया है कि उन्हें 'येशु' या 'जेसू' क्यों कहते हैं। तो आज हम श्रीकृष्ण के उन दो पक्षों को देखेंगे जो उनके दिव्य अवतरण से अभिव्यक्त हुए।

श्री राम के जीवन में उन्होंने एक ऐसे पुरुष को दर्शाया जो 'पुरुषोत्तम' थे, सांसारिकता के दृष्टिकोण से सर्वोत्तम पिता और श्री कृष्ण के जीवन में उन्होंने सर्वश्रेष्ठ पितृ–धर्म को दर्शाया–योगेश्वर को, तथा उनके दिव्य कार्यों को। अतः श्रीकृष्ण का पहला पक्ष, जो हमने समझना है, 'योगेश्वर' रूप है और उनका दूसरा पक्ष 'विराट' रूप।

योगेश्वर अर्थात योग के स्वामी या योग की शक्ति। वे योगेश्वर इसलिए कहलाते हैं क्योंकि उन्होंने उस उच्चतम अवस्था को प्राप्त कर लिया था जो किसी भी योगी का लक्ष्य होती है। मानो वे ही वो आदर्श हों जिस तक आपने पहुँचना है। योगी के रूप में, उनका जन्म एक शाही परिवार में हुआ परन्तु वे वनों में, जंगलों में, गऊओं के साथ, सर्व–साधारण लोगों के साथ रहे। गायें चराने के लिए जब वे जाते तो कहीं भी सो जाते, कभी पत्थरों पर, कभी घास पर। अपनी शक्तियों के प्रति वे अत्यन्त जागरूक थे, अत्यन्त–अत्यन्त चेतन, अत्यधिक चेतन, परन्तु इस मामले में उनमें ज़रा भी अहं न था। संहार–शक्ति उनकी एक विशेष शक्ति थी जिससे वे दिव्याभिव्यक्ति को हानि पहुँचाने वाले सभी लोगों को नष्ट कर सकते थे।

उनके हाथ का चक्र (सुदर्शन) इस संहार शक्ति की अभिव्यक्ति है और दूसरे उनकी गदा। ये दोनों शक्तियाँ उनके अन्दर थीं और वे राधा की शक्ति के अनुरूप कार्य करते थे क्योंकि राधा जी ही श्रीकृष्ण की शक्तियों को धारण करती है। इसका प्रमाण ये है कि जब तक वे राधा के साथ गोकुल में थे तब तक उन्होंने 'संहार' कार्य किया, तत्पश्चात् वे अर्जुन के सारथी बन गए। तो अपने शिष्य अर्जुन के लिए वो उनके सारथी तक बन गए।

"योगेश्वर' का एक अन्य महान गुण उनकी 'पूर्ण सद–सद् विवेक' की शक्ति थी। वो जानते थे कि कौन राक्षस है और कौन नहीं है, कौन अच्छा है और कौन बुरा, कौन भूत–बाधित है और कौन नहीं, कौन अबोध है और कौन नहीं। ये गुण उनके अन्तर्रचित था– 'सद–सद विवेक' की पूर्ण शक्ति।

उनमें अपने साक्षी भाव को (साक्षित्व) प्रकट करने का सामर्थ्य था। उनमें ये सामर्थ्य था। मेरा अर्थ ये है कि वो स्वयं साक्षी थे – इस प्रकार से समझना आसान होगा। वे साक्षी थे। उनमें पूरे विश्व को लीला रूप में देखने की क्षमता थी। श्री राम के युग में, स्वयं को पूर्ण मानव दर्शाने के लिए वे अपनी समस्याओं में लिप्त हो गए थे ताकि लोग ये न कह सकें कि वे परमात्मा हैं। तो किस प्रकार हम परमात्मा को स्वीकार करें क्योंकि "आखिरकार तो वे परमात्मा थे। साक्षित्व की उनकी योग्यता सभी योगियों में दिखाई पड़नी चाहिए। वे आकाश तत्व को नियंत्रित करते हैं। संस्कृत में हम इसे 'आकाश' (Ether) तत्व कहते हैं। अब आप जानते हैं कि आकाश तत्व को हम दूरदर्शन, रेडियो तथा अन्य सभी प्रकार के सामूहिक कार्यों के लिए उपयोग करते हैं। तो योगियों के रूप में आकाश–तत्व पर हमारा नियंत्रण होना चाहिए। यह सभी तत्वों में सूक्ष्मतम है। क्योंकि इसके माध्यम से आप किसी भी चीज़ में प्रवेश कर सकते हैं, बिल्कुल प्लास्टिक की तरह से, हर पदार्थ में, वायु में भी। परन्तु ये चीज़ें आकाश तत्व में प्रवेश नहीं कर सकती। अतः नकारात्मकता भी आकाश–तत्व में प्रवेश नहीं कर सकती। तो जब आप आकाश क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तो वास्तव में उस क्षेत्र में प्रवेश करते हैं जो निर्विचार चेतना का क्षेत्र है और उसका सम्पोषण ईसा–मसीह करते हैं, आत्मा द्वारा होता है। अतः एक योगी के रूप में अब आपने महसूस करना है कि आपकी मानसिक स्थिति आकाशीय (स्वर्गीय) होनी चाहिए।

और आपके प्रति अहं की क्या स्थिति होनी चाहिए? यह इसका अहं भाग है कि आपको आकाशीय स्थिति में होना चाहिए, आपको चाहिए कि नकारात्मकता के खेल को देख सकें। नकारात्मकता भाग जाएगी। आप इसके हाथों में न खेलें। नकारात्मकता आपसे दूर हो जाएगी। **अहं और प्रतिअहं दोनों विशुद्धि चक्र से उठते हैं। आज्ञा चक्र इन्हें अधोगति की ओर ले जा सकता है, परन्तु विशुद्धि चक्र को इन्हें अपने अन्दर खींचना होगा।**

योगेश्वर का महानतम गुण ये है कि वो बिल्कुल भी लिप्त नहीं होते, पूर्णतः निर्लिप्त हैं, पूर्णतः। खाना खाकर भी वो नहीं खाते, वो बोलते हैं फिर भी नहीं बोलते, वो देखते हैं फिर भी नहीं देखते, सुनते हैं फिर भी नहीं सुनते। इन चीजों की उन पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती, कोई प्रभाव नहीं होता और न ही वे इनके अनुरूप कार्य करते हैं। वो जो भी हैं पूर्ण हैं – सोलह कलाएं, पूर्णिमा के चाँद की होती हैं, चाँद का सोलहवाँ दिन पूर्णिमा होती है। व्यक्ति को भी ऐसा ही होना चाहिए, अपने आप में पूर्ण, पूर्णतः आत्म विश्वस्त। परन्तु अहंकार को आत्म–विश्वास नहीं मान लिया जाना चाहिए, आत्म विश्वास पूर्ण विवेक है, पूर्ण धर्म, पूर्ण प्रेम, पूर्ण सौन्दर्य और पूर्ण परमात्मा है, इसे यही होना चाहिए।

जब उन्होंने गीता में कहा, "**सर्वधर्माणां परित्यज्य मामेकमं शरणम व्रज।' तो उनका अभिप्राय ये था कि जिन चीज़ों के बारे में आप चिन्तित हैं उन सभी चीज़ों की चिन्ता को छोड़ कर मुझसे एक रूप हो जाएं, मैं आपकी देखभाल करूंगा। श्रीकृष्ण पर जिम्मेदारी छोड़ दें।** तो पूर्ण समन्वित दिव्यत्व आपके माध्यम से अभिव्यक्त होने लगेगा। अभिप्राय ये है कि यदि आप कहते हैं कि मुझे जिम्मेदार होना है तो वो कहते हैं, "ठीक है, आगे बढ़ो, और प्रयत्न करो।" परन्तु आप यदि कहते हैं कि "आप जिम्मेदार हैं, मैं तो केवल एक संस्था हूँ या आपके हाथों में यन्त्रवत् हूँ" तो आप इसकी अभिव्यक्ति भली-भांति कर सकते हैं। इस प्रकार से आपका विशुद्धि चक्र खुल जाता है।

योगेश्वर के बारे में मैंने आपको थोड़ा सा बताया है। परन्तु वे हमारे अन्दर मस्तिष्क हैं। वे हमारे अन्दर मस्तिष्क बन जाते हैं। दिव्य मस्तिष्क के सारे गुण, जो हमारे अन्दर हैं, हमें उनका ज्ञान होना चाहिए। अतः अपने मस्तिष्क से जो भी कुछ हम करते हैं, जैसे कुचक्र, धोखाधड़ी अन्य सभी बुराईयाँ, ये सब दिव्य उद्‌देश्य के लिए वही करते हैं और बुरे कार्य करने का इल्जाम भी अपने पर नहीं लेते। और इसका दूसरा पक्ष सकारात्मक कहलाता है। जैसे राजनीति, कूटनीति, नेतृत्व, ये सब उन्हीं के कार्य हैं, जैसे भविष्य के बारे में सोचना, योजनाएं बनाना, विचार करना, प्रशासन, ये सभी कार्य वे करते हैं। लीला के रूप में, हर कार्य खेल मानकर किया जाता है क्योंकि वे स्वामी हैं और 'सूत्रधार' भी जो मूक अभिनेता की तरह से तारों को झंकृत करते हैं।

अन्य चीज़, जो आज सहजयोग की अवस्था में, हमने श्रीकृष्ण के बारे में समझनी है, वह है इस समय अभिव्यक्त होने वाली विराट शक्ति, उनके समय पर अभिव्यक्त होने वाली श्रीकृष्ण शक्ति नहीं। आज जो शक्ति कार्य कर रही है वह श्री राधा या श्री मैरी की शक्ति नहीं है यह 'वीराटांगना' की शक्ति है। यही कारण है कि **सहजयोगियों का ज्ञान युग-युगान्तरों के सन्तों से कहीं विशाल है। परन्तु ये उनसे गहन नहीं है। अपने ज्ञान को यदि आप गहन बना सकें तो इस विस्तृत ज्ञान की जड़ें आपके अन्दर ठीक से लग जाएंगी।** अतः जड़ें मस्तिष्क में हैं, पूरे जीवन वृक्ष की जड़ें यहीं हैं। कुण्डलिनी जब उठती है तो सबसे पहले मस्तिष्क को सींचती है ताकि पूरा जीवन-वृक्ष परमेश्वरी आशीर्वाद और परमेश्वरी ज्ञान से शराबोर हो जाए।

अतः जिस विराट शक्ति को हमें कार्यान्वित करना है ये सर्वप्रथम हमें सामूहिक चेतना का विवेक प्रदान करती है। सर्वप्रथम हम इसे अपनी बौद्धिक शक्ति से समझते हैं। परन्तु मस्तिष्क की सारी शक्ति का सिंचन और पथ-प्रदर्शन हृदय द्वारा होना चाहिए। संस्कृत का शब्द 'सिंचन' अत्यन्त सुन्दर है, जैसे ओस की बूंदें, परमात्मा के प्रेम का छिड़काव। तो मस्तिष्क का समन्वयन आपके हृदय और ज़िगर के माध्यम से घटित होना चाहिए। केवल तभी विराट शक्ति दूसरा रूप धारण करती है। विनाश के शस्त्र, क्षमा के शस्त्र बन जाते हैं। सभी प्रकार की विनाशकारी शक्ति रचनात्मक शक्ति बन जाती है मानो युक्ति-पूर्वक इसका रुख बदल दिया गया हो।

जैसे मैंने अभी इन्हें एक युक्ति बताई थी किस प्रकार इन गुरुओं से युक्ति का उपयोग करें। उनके अन्दर की शक्ति को उन्हीं के विरुद्ध मोड़ा जा सकता है, जैसे कहा गया है कि उनके दाँत उन्हीं की गर्दन में गड़ा दो, उन्हीं के गले में गड़ा दो। उनके दाँत तोड़ देने की अपेक्षा उन दाँतों को उन्हीं के गले में गाड़ दो। आप यदि ऐसा कर सकते हैं तो जहाँ तक हम पर उनके प्रभाव का प्रश्न है, कोई समस्या नहीं है क्योंकि आप अधिक शक्तिशाली हैं, अधिक युक्तियुक्त हैं।

विराट शक्ति ने अब वह रूप धारण कर लिया है वैसे ही जैसे पेड़ जब बड़ा होता है तो ऊपर की ओर बढ़ता है। परन्तु जब ये फलों से लद जाता है तो नीचे की ओर झुकता है। पहले तो ये अपने फूलों के कारण आकर्षित करता है, अपनी लकड़ी के कारण तथा शरीर के अन्य भागों के कारण। वृक्ष की इन खूबियों के कारण लोग इन्हें नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु जब वृक्ष पर फल आते हैं तो लोग इनकी रक्षा करना चाहते हैं, विनम्रता से पेड़ नीचे की ओर झुक जाता है और यह बहुमूल्य बन जाता है।

तो आप लोग फल हैं, वह वीराटांगना शक्ति हैं, आप फल हैं। आप इतने बहुमूल्य हैं कि जो लोग परमेश्वरी शक्ति को इस पृथ्वी से मिटाना चाहते थे, नष्ट करना चाहते थे, वो अब सोचेंगे कि इन फलों से (योगियों से) उन्हें कुछ लाभ उठाना हैं तो आज इस विराट शक्ति ने आपको महान मूल्य प्रदान किया है क्योंकि लोगों को नज़र आता है कि किसी सहजयोगी को साथ रखना कितना मंगलमय होता है! आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् किसी भी व्यक्ति को ये मूल्य प्राप्त हो जाता है और इस मूल्य (महत्व) के कारण उसका सम्मान होता है, उसे प्रेम प्राप्त होता है और यदि वह सच्चा सहजयोगी है तो उसे श्रेष्ठतम मान प्राप्त होता है।

आज आपको ये समझ लेना चाहिए कि विराट शक्ति–हम विराट शक्ति की पूजा करने वाले हैं जिसने फल दिए हैं। इसके परिणाम स्वरूप ये भिन्न चर्च, कट्टरवाद, अनीश्वरवाद, साम्यवाद तथा सभी वाद निष्क्रिय हो जाएंगे क्योंकि इन सबको इसी में अपना हित नजर आएगा, परन्तु आपको तो वह बनना है। सबसे बड़ी बात जो व्यक्ति ने जाननी है, वह है पृथ्वी माँ की ओर झुकना, विनम्र होना। अन्दर पूर्ण विनम्रता का होना वास्तव में आपको सहजयोग के फलों का पूर्ण मूल्य प्रदान करेगा।

जो सहजयोगी अपनी शेखियाँ बघारते रहते हैं वो ऐसे फल की तरह से हैं जो पेड़ पर ही नष्ट हो रहा है। जो नीचे झुक जाते हैं केवल उन्हीं फलों को पका हुआ माना जाता है, उनको नहीं जो बल देकर कहते हैं कि वे सबसे ऊँचे हैं। परन्तु कहीं ऐसा न हो कि नकारात्मक लोग इस बात का लाभ उठा लें और कहें कि क्योंकि वे विनम्रता दिखाते हैं इसलिए वे अच्छे हैं। ये कोई तर्क नहीं है। कुछ लोग विनम्र होने का दिखावा करते हैं, कुछ सड़े हुए फल भी झुक जाते हैं। परन्तु पका हुआ फल अपने वज़न से अपनी विनम्रता दर्शाता है। यह गुरु तत्व का वज़न है।

अतः विराटांगना शक्ति से फल रूप में

विकसित होने की शक्ति आपको प्राप्त होती है और तब आप गुरुतत्व से आशीर्वादित होते हैं। **जो लोग अभी भी बेहतर धूप, बेहतर जल और अन्य चीज़ों को प्राप्त करने में लगे हुए हैं, वे अभी तक परिपक्व नहीं हुए है क्योंकि फल को न तो पृथ्वी माँ से कुछ चाहिए न ही अन्य तत्वों से। ये तो समर्पित हो जाता है, झुक जाता है, पृथ्वी माँ के सम्मुख झुक जाता है। अतः जो सहजयोगी माँ से प्रश्न किए चले जाते हैं, उनके सम्मुख निजी समस्याएं, मूर्ख धारणाएं, नकारात्मकता, लाते हैं, वो सब अभी तक फल नहीं बने।**

परिपक्व व्यक्ति तो वो हैं जो समर्पित हो जाते हैं, पृथ्वी माँ के सम्मुख झुक जाते हैं। अतः विनम्रता अपना आंकलन करने का सर्वोत्तम मापदण्ड है और सभी कुछ अपनी माँ की गुरुत्व शक्ति पर छोड़ देना ताकि वह आपके लिए कार्य कर सके। अपनी सभी छोटी–छोटी चिन्ताओं को पीछे छोड़ते हुए आपने विक्षिप्त करने वाली इन शक्तियों से ऊपर उठना है और इस विराट शक्ति के पूर्णत्व को प्राप्त करना है जो अन्ततः 'माधुर्य–शक्ति' बन जाती है। 'मधुर' शब्द अंग्रेजी भाषा में नहीं है। परन्तु इसका अर्थ है मिठास की शक्ति। जैसे फल मीठा हो जाता है। इसी प्रकार से आपके पास भी सभी कुछ बहुत मधुर होना चाहिए। श्रीकृष्ण की सारी लीला, उनके सारे नृत्य क़ा संचालन भी यही माधुर्य शक्ति कर रही थी। उनकी सभी कथाएं यदि आप पढ़ें तो ये माधुर्य शक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं, गोप–गोपियों के साथ, अन्य सहजयोगियों के साथ, उनकी कथाएं।

अतः अन्य सहजयोगियों को, दूसरे लोगों को नहीं, प्रसन्न रखकर आपको अपनी माँ को प्रसन्न रखना है। ये बहुत महत्वपूर्ण हैं। आज पूजा को संक्षिप्त करने जा रहे हैं, इसी कारण ऊपर (की मंजिल पर) अधिक समय लगा, इसे छोटा करने के लिए। तो खोए हुए समय को हमेशा–हमेशा के लिए पा लें।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

विशुद्धि चक्र

विएना - 4.9.1983
(परम पूज्य श्रीमाताजी का पूजा-पूर्व प्रवचन)

अमेरिका जाने से पूर्व मैं विशुद्धि चक्र और हमारे अन्तःस्थित श्री कृष्ण तत्व के बारे में कुछ और बताना चाहती थी। जिनेवा की पहली पूजा में मैंने इसके बारे में काफी बताया था परन्तु इसका कोई अन्त नहीं है। निःसन्देह, क्योंकि ये विराट का चक्र है। परन्तु व्यक्ति को ये बात समझनी है कि श्री कृष्ण का सन्देश या समर्पित होना, स्थूल अर्थों में हम समर्पण का अर्थ वैसे लेते हैं जैसे एक शत्रु दूसरे शत्रु के सम्मुख समर्पण करता है। तो जब भी समर्पण शब्द बोला जाता है, हमारे मन में एक धारणा बन जाती है कि हमें किसी अन्य के प्रति कुछ समर्पण करना है। परन्तु श्री कृष्ण ने जब समर्पण की बात की थी तो उन्होंने कहा था, "अपने शत्रुओं को मुझे समर्पित कर दो, ताकि मैं आपको इनसे मुक्ति दिला दूँ।"

हमारा सबसे बड़ा शत्रु अहं है। अहं से अन्य सभी समस्याओं का आरम्भ होता है क्योंकि हमारी उत्क्रान्ति में अहं सबसे बड़ी बाधा है और जैसा हम जानते हैं अहं विशुद्धि चक्र से आरम्भ होता है तथा विशुद्धि चक्र ही इसे सोखता है।

तो आइए देखें कि विशुद्धि चक्र किस प्रकार बना है। जिन भी सुरों का हम उपयोग करते हैं वे सब विशुद्धि चक्र से आते हैं। और जैसे देवनागरी भाषा में है – अं, अः भी यही हैं। स्वर के बिना आप किसी भी शब्द का संकलन नहीं कर सकते, यह इतना महत्वपूर्ण है। स्वर के बिना व्यंजन दुर्बल होता है, शक्तिहीन होता है। **अतः व्यक्ति की शक्ति उसकी वाणी में विशुद्धि चक्र से आती है।** परन्तु यह एकदम सख्त भी हो सकती है। ये शक्ति एकदम सख्त भी हो सकती है। मान लो आपके पास एक बहुत शक्तिशाली हथियार है परन्तु यदि आप उसे उठा ही नहीं सकते तो ऐसे हथियार के होने का क्या लाभ है? यह 'श्रीमान अहं' इस हथियार को जाम मशीनगन की तरह से सख्त और भारी बनाने का प्रयत्न करता है। **उन्होंने यही बात कही कि "अपना अहं मुझे समर्पण कर दो," ताकि जब आप किसी मन्त्र या शब्दों का उच्चारण करें तो वे प्रभावशाली, अच्छे, असरदार और कुशल हथियार बन सकें।**

जब हम बात करते हैं तो, आइए देखते हैं, किस प्रकार आपका अहं आपकी बातों से झलकता है, ताकि आप ये जान सकें कि 'मुझे किस प्रकार सम्बोधित करना है और किस प्रकार मेरा आँकलन करना है।' उदाहरण के लिए मेरे सम्मुख बहुत ज्यादा गर्दन हिलाना, इस बात की निशानी है कि श्रीमान अहं बिना बात के सिर हिला रहे हैं। जैसे बहुत से लोगों में आदत होती है यदि उन्हें हाँ कहना हो तो वे इस शब्द को दस बार कहेंगे। इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। विनम्रतापूर्वक केवल एक बार सिर हिलाकर कहें "हाँ श्रीमाताजी" ये ठीक है। ये समझते हुए कि वहाँ श्री कृष्ण बैठे हुए हैं, सम्मान–पूर्वक आप अपनी गर्दन को हिलाएं, गरिमापूर्वक। हमेशा हम इस बात को भूल जाते हैं और किसी से भी बात करते हुए हम अपने आपको दर्शाने के लिए गर्दन हिलाने लगते हैं। गर्दन को

हम इस प्रकार हिलाते हैं कि दूसरे व्यक्ति पर इसका रोब पड़े।

अब एक और तरीका है जिसमें मुझसे बात करते हुए आप कहते हैं "नहीं श्रीमाताजी"। आम बात है, मैं यदि कुछ कहती हूँ तो लोगों की प्रतिक्रिया ये भी हो सकती है, "नहीं श्रीमाताजी"। आखिरकार आप देखते हैं कि प्रगति चल रही है और जब मैं बोलती हूँ तो ये मन्त्र होता है, और जब मैं नहीं बोलती तो मन्त्र–प्रवाह हो रहा होता है और अचानक आप अपने "नहीं श्रीमाताजी" के साथ आ जाते हैं और पूरे वातावरण में एक तरंग की रचना कर देते हैं। उस समय आप यदि केवल मुझे सुने कि मैं क्या कह रही हूँ तो मेरा कथन ही इसे कार्यान्वित कर देगा। आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा।

एक और तरीका आपकी वो शैली है जिसमें आप मुझसे बात करते हैं। इसमें भी मैं आपकी दाईं विशुद्धि को कार्य करते हुए पाती हूँ। ऐसा तब होता है जब हम आम–तौर पर एक दूसरे से बात करते हैं, हमें यदि हाँ कहना होता है तो हम कहते हैं "हूँ–हूँ"। यहाँ पर ए–ए कहना आम बात है। इस शैली में वे कहते हैं 'हूं–हूं' और इससे भी अधिक वो कहते हैं "मं–मं" मानो आप इसे स्पष्ट देख रहे हैं इसमें आपको कुछ मिल नहीं रहा होता परन्तु आप इसे बराबर के दबाव में प्रवाहित करने का प्रयत्न कर रहे होते हैं।

विनम्रता, विशुद्धि के अहं पर विजय पाने का सर्वोत्तम मार्ग है। दूसरों से बात–चीत करते हुए ऐसे मधुर तौर तरीके विकसित करें, इतने मधुर कि किसी का दिल न दुखे। और आप हैरान होंगे कि बिना किसी देरी के विशुद्धि इतनी मधुरता पूर्वक बर्ताव करने लगेगी क्योंकि भूतों को मधुरता अच्छी नहीं लगती वे झगड़ालू होते हैं, कठोर होते हैं, और हमेशा वे ऐसा कुछ कहने का प्रयत्न करते हैं जिससे दूसरों को चोट पहुँचे।

दाईं विशुद्धि को समर्पण द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। वास्तव में आरम्भ में आप अपना अहं समर्पित करते हैं। इस अहं का जब आप समर्पण करते हैं तो यह समर्पण 'हृदयपूर्वक होना चाहिए, ये केवल जुबानी जमा खर्च नहीं होना चाहिए। आपके हृदय से, "अब मुझे इस अहं की कोई आवश्यकता नहीं है, मैं सच्चाई चाहता हूँ।" मैं यह सच्चाई देखूं, इसे महसूस करूं, और इसका आनन्द लूं।" एक बार हृदय से जब आप ऐसा करने लगेंगे तो आपको हैरानी होगी कि आपकी आवाज मधुर हो जाएगी। इसके अतिरिक्त आपकी आवाज़ में परमेश्वरी शक्तियाँ प्रवाहित होने लगती हैं। यही बात हम कहते हैं कि अब आप में वाक्–शक्ति आ गई है, अर्थात वाणी की शक्ति।"

जब आप अहं समर्पण करते हैं तब कहते हैं, "मैं कुछ नहीं कर रहा, आप ही सभी कुछ कर रहे हैं।" नन्हीं बूंद अब सागर बन गई है और आपकी वाणी में अब सागर की शक्ति उत्पन्न हो गई है।

दूसरी बात ये है आपने अहं समर्पित करना है, मिथ्याभिमान समर्पित करना है। मिथ्याभिमान बहुत प्रकार का हो सकता है, उन चीज़ों का जो पूर्णतः बनावटी होती हैं। परमात्मा

के सम्मुख आपकी सम्पत्ति कौन सी है? आपका पैसा क्या है? आपका पद क्या है? आपका परिवार क्या है? शिक्षा क्या है? परमात्मा के सम्मुख ये सभी चीज़ें मूल्यहीन हैं। अतः व्यक्ति को महसूस करना है कि यदि हम परमात्मा की सम्पत्ति है तो हमें केवल एक ही चीज़ पर गर्व होना चाहिए कि उनका चैतन्य हमारे माध्यम से प्रवाहित होता है अर्थात उन्हें (परमात्मा) हम पर गर्व है।

मान लो आप मुझे कोई फल देते हैं या गणेश या कुछ और देते हैं तो यह बहुमूल्य बन जाता है क्योंकि मैंने इसे छू लिया है और इसमें चैतन्य आ गया है। उदाहरण के रूप में यदि धातु को लें, तो इस गणेश का मूल्य कुछ भी नहीं है। परन्तु कला की चीज़ बनने के बाद इसका मूल्य कुछ बढ़ गया है। इस संसार में कलात्मकता से चीज़ों के मूल्य बढ़ते हैं, परन्तु परमात्मा के साम्राज्य में या आध्यात्मिक संसार में, या परमेश्वरी संसार में गणेश जी का मूल्य, उसी गणेश का, उससे हजारों गुणा बढ़ जाएगा जितना वह उस समय था, जब वह केवल एक कलाकृति था। अतः अब जो आपको दिया जाएगा वह बहुत मूल्यवान है। अतः बनावट और बनावटी चीज़ों का अहं और मिथ्याभिमान मानवकृत है, बनावटी है और यह समर्पित किया जाना चाहिए क्योंकि यह मात्र एक मिथक है।

मानव-मस्तिष्क में ईर्ष्यालुपन दूसरों से ईर्ष्या करना एक अन्य दुर्गुण है। यह विवेकहीनता के कारण आता है। परमात्मा के चरण कमलों में यदि आप अपनी ईर्ष्याएं समर्पित कर दें। मेरा अभिप्राय है कि आप सभी प्रकार की मूर्खताएं करते रहते हैं। आप जानते हैं कि इन विवेकहीन ईर्ष्याओं का कोई मूल्य नहीं – न इस संसार में, न उस संसार में। आश्चर्य की बात तो यह है कि सहजयोगियों में एक दूसरे के प्रति ईर्ष्याभाव है। मैं अभी तक नहीं समझ सकी कि ऐसा किस प्रकार हो सकता है। आप धूप में खड़े हैं और अपनी छाया से ईर्ष्या कर रहे हैं। किसी की छाया बड़ी है, किसी की छोटी है, इस कारण से आपको एक दूसरे से ईर्ष्या है। कभी-कभी मैं किसी एक व्यक्ति को तोहफा देती हूँ और दूसरे को नहीं दे पाती तो उनमें ईर्ष्या पैदा हो जाती है। कभी तो मैं केवल उन लोगों को समय देती हूँ जो वास्तव में भटक रहे हैं।

अतः व्यक्ति को समझना है कि हमारे ईर्ष्या के भाव मात्र मूर्खता है। मैं उन लोगों की बात नहीं समझ पाती जो आत्म साक्षात्कारी नहीं है फिर भी उन्हें सहजयोगियों से ईर्ष्या है और वे उन्हें गिराने का प्रयत्न करते रहते हैं। ईर्ष्यालु बनने की अपेक्षा उन्हें सहजयोगियों जैसा बनना चाहिए। सहजयोग में भी मैंने कुछ अत्यन्त अटपटी चीज़ें घटित होते देखी हैं, इसका उदाहरण ये है कि एक व्यक्ति मेरे पास आया, वह बहुत नाराज़ था कि "श्रीमाताजी आपने उस व्यक्ति-विशेष को इतना समय दिया, मुझे बहुत जलन हो रही है। और आपने कहा, "कि मुझे भी उस व्यक्ति जैसा होना चाहिए जिससे मुझे ईर्ष्या है। मैं जानना चाहूँगा कि जिस व्यक्ति को आपने इतना समय दिया, मैं उस जैसा कैसे बनूं? मैंने कहा, "वह व्यक्ति वास्तव में पागल है! क्या आप भी पागल होना चाहते हैं? क्या आपमें बिल्कुल भी विवेक नहीं है?" सहजयोगी की विशुद्धि यदि ठीक है तो उसमें विवेक होना ही

चाहिए। आपको ये बात समझनी है कि मैं जो कुछ भी कहती हूँ उसका उपयोग विवेकपूर्वक किया जाना चाहिए, आँखे बन्द करके नहीं। अतः आप समझ सकते हैं कि जो कुछ भी मैं कहती हूँ बिना विवेक के बेतुके ढंग से उसका उपयोग करना आपकी उत्क्रान्ति के लिए हानिकारक भी हो सकता है।

अहं की एक अन्य शाखा भी है – गर्म-मिज़ाज होना। निःसन्देह इसका उपयोग उन लोगों के विरुद्ध होता है जो आपकी माँ का अपमान करने का प्रयत्न करते हैं। उनके विरुद्ध आपको करना पड़ता है। जैसा ईसा-मसीह ने कहा था इसका उपयोग उनके लिए किया जाना चाहिए जो आदि शक्ति के विरुद्ध कार्य करते हैं। इसी प्रकार से आप लोगों को भी चाहिए कि मेरे विरुद्ध किसी भी प्रकार की हिमाकत को बर्दाश्त न करें, इतनी सी को भी नहीं। परन्तु अन्य मामलों में आप दूसरे सहजयोगियों को सहन कर सकते हैं।

''लालच'' हमारा एक अन्य शत्रु है। मेरा अभिप्राय है पदार्थों का लालच तथा मानवीय लालच भी, जैसे अपनी पत्नी और बच्चों से लिप्सा, इस चीज़ से लिप्सा, श्रीमाताजी पर अधिकार। इसका भी समर्पण किया जाना चाहिए। सहजयोगियों में लालच का होना बहुत भयानक हो सकता है। ये मेरा कालीन है, ये मेरा कैमरा है, ये मेरा टेपरिकार्डर है! एक बार जब आप समझ लेंगे कि ये सारी वस्तुएं असत्य हैं तो आप जान जाएंगे कि सत्य के सिवाए कुछ भी मेरा नहीं है।

मैं कुछ ऐसे लोगों को भी जानती हूँ जो कहते हैं, ''मेरी नौकरी, मेरा व्यापार, मेरा उद्यम।'' उस दिन जिनेवा में एक सज्जन बहुत कष्टकर थे क्योंकि वो अपनी सभी चीज़ों के प्रति बहुत चेतन हैं।

अतः लालच। अन्य महिलाओं के प्रति कामुकता और वासना में बहुत अधिक लिप्त होना, कामुकता के साधनों को बहुत अधिक महत्व देना। इससे केवल सहजयोगियों के लिए ही नहीं पूरे सहजयोग के लिए भी बड़ी-बड़ी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। इस प्रकार की वासनात्मकता की अभिव्यक्ति दोनों प्रकार के लोगों में होती है, उन लोगों में जो संसार में निरंकुश जीवन जी रहे हैं तथा उन लोगों में भी जो बहुत अधिक दबे हुए हैं। मैं ऐसे लोगों को जानती हूँ जिनके बारे में माना जाता है कि वे तथाकथित धार्मिक वातावरण में पले हैं, परन्तु महिलाओं का संग मिलते ही, अचानक वे बुरी तरह से उनकी ओर आकर्षित हो जाते हैं।

आपकी अबोधिता की परिपक्वता का विकास होना आवश्यक है, यही आपको धार्मिक व्यक्ति बनाए रखती है – पुरुषों और महिलाओं के साथ अपनी सीमा पहचानने की अबोधिता। बच्चों को, यदि आप देखें तो वे भली-भांति जानते हैं कि किसी महिला या पुरुष से किस प्रकार व्यवहार करना है। अतः अबोधिता मूर्खता नहीं है। ये पूर्ण विवेक है और पूर्ण परिपक्वता है। इसे इस बात का ज्ञान है कि बिना इन शत्रुओं में लिप्त हुए किस प्रकार लोगों के बीच रहना है। इन रिपुओं में से हर एक में, न केवल एक व्यक्ति परन्तु अरबों अरब लोगों को नष्ट करने की शक्ति है। **अतः अपने विशुद्धि चक्र के पूर्ण स्वभाव का विकास करने के**

लिए सर्वोत्तम उपाय है - सभी कुछ साक्षी भाव, निर्लिप्त मस्तिष्क से देखना और अपनी माँ (श्रीमाताजी) के लिए अपने हृदय में प्रेम विकसित करना ताकि वे इन सभी शत्रुओं से आपको इस प्रकार से मुक्त कर सकें ताकि जब भी इनसे आपका सामना हो तो आप उनसे कहीं शक्तिशाली हों।

मानसिक रूप से मैं सोचती हूँ, अधिकतर सहजयोगी समझते हैं कि परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारी होना एकमात्र उपाय है। मानसिक रूप से, तार्किक रूप से। चाहे आप किसी चीज़ को मानसिक रूप से समझ भी लें तो भी यह आपका अन्तर्जात स्वभाव नहीं है। तो जैसा मैंने कल आपको बताया था **किसी चीज़ को जब आप मानसिक रूप से स्वीकार कर लेते हैं परन्तु उसके अनुरूप कार्य नहीं कर सकते, तो इस मामले में, आपके अन्दर दोषभाव आता है।** ऐसी स्थिति में आप अपने गुरु बनें और स्वयं को दण्डित करें, तथा इसे अपना अन्तर्जात स्वभाव बनाने का प्रयत्न करें। यह एक अवस्था है जो मिल जाती है। एक बार जब ये प्राप्त हो जाती है तो तुरन्त आप देखने लगते हैं। मैं जानती हूँ कि समर्पित कौन है।

तो श्रीकृष्ण ने कहा है : *सर्वधर्माणां परित्यज्य, मामेकम शरणम व्रज*" उन्होंने कहा है कि "*सभी धर्मों को त्यागकर मेरे प्रति समर्पित हो जाओ।*" हमारे देश में जो धर्म है, जैसे हम कहते हैं "पितृ–धर्म है, पिता के प्रति आपके कर्तव्य, मातृ–धर्म, माता के प्रति आपके कर्तव्य, पति के प्रति कर्तव्य और इसी प्रकार सभी सम्बन्धों के अनुसार आपके धर्म। परन्तु जब वे कहते हैं कि "इन सभी धर्मों को त्यागकर", तो उनका अर्थ है "मेरे प्रति अपने धर्म का ज्ञान आपको होना चाहिए– 'परमेश्वर के प्रति'। **आज श्रीकृष्ण नहीं है, मैं ही श्रीकृष्ण हूँ,** अतः आपको इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि मेरे प्रति आपके क्या कर्तव्य हैं। मैंने केवल अपनी भाषा बदली है। वे तो अपनी अंगुली उठाकर कह दिया करते थे, "सभी कुछ त्यागकर मेरे प्रति समर्पित हो जाओ।" मैं वैसे नहीं करती, बहुत बड़ा प्रवचन देकर आपको रास्ते पर लाती हूँ।

अतः ये चीज़ें आपके चित्त को, मेरे प्रति समर्पित होकर प्राप्त किए जाने वाले लक्ष्य से हटाकर दूसरी ओर न ले जाएं। यहाँ उपस्थित सभी लोगों पर यह भली–भांति कार्यान्वित होगा, और मुझे विश्वास है कि एक दिन मैं पाऊंगी कि सभी जर्मन लोग परमात्मा के चरण–कमलों में समर्पित हो गए हैं।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

सहजयोग और आरम्भिक छन्द

(निर्मला योग -1983)

(रूपान्तरित)

अब जब श्रीमाताजी ने हमें बहुत से सुन्दर बच्चों से आशीर्वादित कर दिया है, एक बार फिर अपने बचपन के गानों को स्मरण करने पर हम युगों पुराने आरम्भिक छन्द गाने शुरु कर रहे हैं। एक बार हमारी प्रिय श्रीमाताजी ने बताया था कि किस प्रकार ये आरम्भिक छन्द उनके तथा सहजयोग के कुछ पक्षों का वर्णन करते हैं। ये लेखक इन छन्दों में सहजयोग के अन्य दृष्टिकोण खोजने की धृष्टता कर रहा है। आशा है कि उसके विचार सभी माता-पिताओं तथा अन्य लोगों के लिए भी आनन्दमयी होंगे।

नीचे तीन छन्द दिए गए हैं जिनके विषय में स्वयं श्रीमाताजी ने बताया: नव-यूरोशलम लन्दन, इंग्लैण्ड से आरम्भ होता है जो ब्रह्माण्ड का हृदय है और आजकल श्रीमाताजी का गृह भी है। परन्तु जब श्रीमाताजी लन्दन में अपने बच्चों को बुलाने के लिए आई थी, तब उनमें से बहुत से, 'पतन' (Falling down) की स्थिति तक क्षत हो चुके थे, और उनका पुनर्निर्माण करने के लिए श्रीमाताजी को हर सम्भव उपाय अपनाना पड़ा। बहुत समय पूर्व किसी ने इसके विषय में एक गाना बनाया था जिसे बच्चे अब भी गाते हैं।

"लन्दन-पुल गिर रहा है, गिर रहा है, गिर रहा है,
लन्दन-पुल गिर रहा है ओ मेरी निष्कलंक सुन्दरी,
सहायता करो इसका पुनर्निर्माण करने में,
पुनर्निर्माण करने में, पुनर्निर्माण करने में,
ओ निष्कलंक सुन्दरी, सहायता करो,
इसके पुनर्निर्माण करने में
कर दो निर्माण इसका लकड़ियों और पत्थरों से,
लकड़ियों और पत्थरों से, लकड़ियों और पत्थरों से,
निर्माण कर दो इसका, लकड़ियों और पत्थरों से,
ओ मेरी निष्कलंक सुन्दरी।"

श्रीमाताजी ही निष्कलंक सुन्दर महिला हैं।

लन्दन के विषय में एक अन्य अत्यन्त उपयुक्त आरम्भिक छन्द भी है। यह निम्बुओं (क्योंकि अभी तक भी इंग्लैण्ड में मिर्चों के बारे में कोई न जानता था) और घण्टियों के बारे में है जिन्हें प्राचीन काल से आसुरी शक्तियों को हराने के लिए उपयोग किया जाता है। इस गाने में लन्दन शहर के चर्चों की घण्टियों का सन्दर्भ है, लन्दन शहर आजकल विश्व की आर्थिक राजधानी है तथा अन्य चीज़ों के साथ-साथ यहाँ पर नाभि की पकड़ भी बहुत तेज है।

"सन्तरे और निम्बू,
कहती है घण्टियाँ सेंट क्लेमेन्टस (St. Clement's) की।
मुझ पर पाँच दमड़ियों का ऋण है तुम्हारा,
कहती हैं घण्टियाँ सेन्ट मार्टिन (St. Martin) की।
कब लौटाओगी मुझे ये दमड़ियाँ?
कहती हैं घण्टियाँ, प्राचीन बैले (Bailey) की।
अमीर होने के बाद,
कहती है घण्टियाँ शोरेडिक (Shoraditch) की।
कब होगा ऐसा?
पूछती हैं घण्टियाँ स्टेपनी (Stepney) की।
मैं नहीं जानती,
कहती हैं विशाल घण्टी बौ (Bow) की।"

तीसरा छन्द जिस पर श्रीमाताजी ने टिप्पणी की

थी, एक प्रकार से चेतावनी है, परन्तु यह माधुर्य से परिपूर्ण है। ये इस प्रकार है :

'महिला पंछी (Lady bird) महिला पंछी, महिला पंछी
उड़ जाओ घर की ओर,
घर में तुम्हारे आग लगी,
बच्चे तुम्हारे चले गए।''

श्रीमाताजी ने हमें बताया था कि इस गाने की महिला पंछी (Lady bird) वे स्वयं हैं। महिला पंछी लाल रंग का छोटा सा भृंग (भंवरे सा कीड़ा) होता है जिसकी पीठ पर सात काले धब्बे होते हैं। (इंग्लैण्ड और हिमालय के देशों सहित अन्य बहुत से देशों में ये आमतौर पर पाया जाता है। गुलाब की झाड़ियों को नष्ट करने वाले जूँ जैसे कीड़े (Aphids) को खाना इसे अच्छा लगता है। अतः यह मालियों का मित्र है। छन्द की दूसरी पंक्ति पश्चिमी सहजयोगियों के लिए अत्यन्त स्पष्ट है। इन योगियों ने श्रीमाताजी के बच्चों पर हुए भयानक आक्रमणों को देखा है जिसके कारण वे सहजयोग को छोड़ तक देते हैं। श्रीमाताजी का घर सम्भवतः साधकों का सहस्रार है। साधक जब पहली बार साक्षात्कार के लिए आते हैं तो उनका सहस्रार शीतल होने की अपेक्षा प्रायः जलता हुआ होता है।

अंग्रेजी भाषा में और भी बहुत से आरम्भिक छन्द हैं। नीचे कुछ ऐसे छन्द दिए जा रहे हैं जो सहजयोग के विषय में प्रतीत होते हैं। पहला छन्द बढ़े हुए अहं के विषय में है।

''हम्पटी डम्पटी दीवार पर चढ़ बैठे
और बुरी तरह से गिरे''
''राजा के सारे घोड़े और नौकर भी
पूर्वास्थिति में न ला सके उन्हें''

(All the King's horses and all the King's men couldn't put Humpty together again)

यहाँ हम्पटी डम्पटी अहं के प्रतीक हैं। 'बाबा ब्लेक शीप एक अन्य' लोकप्रिय छन्द हैं।

''बा–बा काली भेड़,
क्या तुम पर कुछ ऊन है।
हाँ श्रीमान, हाँ श्रीमान, तीन बोरे भरे हुए,
एक स्वामी के लिए, एक स्वामिनी के लिए
एक उस नन्हें लड़के के लिए,
गली के छोर पर रहता है जो।''

'काली भेड़' उस अटपटे, सनकी व्यक्ति का वर्णन करने के लिए उपयोग किया गया है जो स्वीकृत मानदण्डों में खरा नहीं उतरता। पश्चिमी साधक प्रायः 'काली भेड़' सम हैं। ये छन्द शायद इसके कारण की व्याख्या करता है। 'ऊन' मिथ्या बन्धनों और अनावश्यक विचारों का ढेर है जिसके माध्यम से हम अपने अहं और प्रतिअहं का प्रदर्शन करते हैं। एक बोरा स्वामी को (दाएं पक्ष को) दिया जाता है, दूसरा स्वामिनी को (बाएं पक्ष को)। गली के छोर पर रहने वाला नन्हा लड़का निश्चित रूप से श्री गणेश है।

अत्यन्त घिनौने गाने भी बच्चे काफी जोशोखरोश से और निर्लिप्सा पूर्वक गा लेते हैं। ये उसका उदाहरण हैं :

''ओ मूर्ख, मूर्ख हंस, कहाँ घूमूँगा मैं?
सीढ़ियों के ऊपर और सीढ़ियों से नीचे
अपनी स्वामिनी (Lady) के कक्ष में तथा
मिला मैं वहाँ एक वृद्ध व्यक्ति से
प्रार्थना जो करता नहीं।

मैंने पकड़ा उसे बाईं टाँग से
सीढ़ियों से नीचे फेंका उसे''

हंस शब्द हँसा चक्र के लिए है, सद्सद विवेकबुद्धि का स्थान, अर्थात हँस, सम्भवतः दूसरी पंक्ति, उस व्यक्ति की ओर इशारा करती है जो हँसा चक्र के आस–पास घूमे चले जा रहा है परन्तु यह निर्णय नहीं कर पा रहा कि सहस्रार में (स्वामिनी के कक्ष में) स्थापित हुआ जाए या नहीं। उसके मूर्खों की तरह से घूमते रहने का परिणाम अन्तिम दो पंक्तियों में प्रकट किया गया है।

समाप्त करने से पूर्व दो ऐसे और छन्द हैं जो श्रीमाताजी के बहुआयामी व्यक्तित्व के दो आयामों का स्तुति–गान करते हैं। पहला श्री आदिकुण्डलिनी के रूप में।

''एक गिरीदार फल का वृक्ष था मेरा
फल कोई लगता नहीं था जिस पर
रौप्य रंग के जायफल (Nutmeg)
और सुनहरी नाशपाती (Pear) के सिवाय
स्पेन के राजा की पुत्री आई मिलने मुझे
मेरे इस नन्हें गिरीदार वृक्ष के कारण।''

गिरीदार वृक्ष कुण्डलिनी है और चाँदी के रंग का जायफल सम्भवतः चन्द्रमा या चाँद है जो बाएं पक्ष की गरिमा को बढ़ाता है। (जायफल का उपयोग निद्रा की दवाई के रूप में किया जाता है और निद्रा बाएं पक्ष का गुण है।) स्वर्णिम नाशपाती सूर्य का प्रतीक है जिसका स्थान दाईं ओर है। पुराने दिनों में स्पेन को महान सम्पदा तथा शानोशौकत का स्रोत माना जाता था। इसीलिए स्पेन की राजकुमारी कुछ विशेष चीज़ हो सकती है। हो सकता है कि राजकुमारी श्रीमाताजी की गरिमा का प्रतीक हो, कुण्डलिनी के कारण जो साधक से मिलने के लिए और उसे आत्म–साक्षात्कार या मोक्ष प्रदान करने के लिए आती हो।

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी की कृपा से सुनॉमी से चमत्कारिक सुरक्षा

(श्रीमति पुष्पा समादार)

26 दिसम्बर 2004 की प्रातः भारतीय महासागर में अंडमान–निकोबार टापुओं सहित अन्य बहुत से टापुओं को नष्टभ्रष्ट करने वाली सुनॉमी त्रासदी से हम सब भली भांति परिचित हैं। कोई न जानता था कि सुनॉमी की आसुरी विध्वंसक लहरों की क्रूरता से किस प्रकार बचा जाए! परन्तु उस ताण्डव के बीच भी परमेश्वरी माँ ने टापु पर बसे अपने सभी सहजयोगी बच्चों की रक्षा की।

अण्डमान, पोर्टब्लेयर के ग्यारा चर्मा (Gyara Charma) गाँव की सहज योग ध्यान केन्द्र समन्विका योगिनी श्रीमती पुष्पा समादार इस विध्वंसक त्रासदी की साक्षी थीं। इस घटना के अपने अनुभव का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया हैः–

"रविवार 26.12.2004 की सुबह थी। अपने बेटे के साथ मैं परम पूज्य श्रीमाताजी के चरण–कमलों का ध्यान कर रही थी। मुझे एक ज़ोरदार झूले का अहसास हुआ जिसे आरम्भ में, गलती से, मैं चैतन्य लहरियाँ समझ बैठी। परन्तु आँखे खोलने पर मैंने सीमेन्ट की चद्दरों की अपनी छत के एक पाईप को चरमराते पाया। मैंने अपने बेटे को झकझोरा। हम 'देवी कवच' पढ़ रहे थे, मेरा बेटा कहने लगा, "मम्मी, चिन्ता मत करो, श्रीमाताजी हमारे साथ हैं।" हमने अपना पाठ समापन किया।

तत्पश्चात्, श्रीमाताजी का एक फोटो लेकर बगीचे में वेदी बनाई, मोमबत्ती जला कर पूरी आवाज पर श्रीमाताजी का वह टेप–प्रवचन सुनने लगे जिसमें उन्होंने सात चक्रों के विषय में बताया है और बीच–बीच में भजन हैं।

सुनॉमी की लहरों का प्रकोप शिखर पर था और अब तक पोर्ट ब्लेयर क्षेत्र को लील चुका था, परन्तु चमत्कार कि यह मोमबत्ती की लौ को न बुझा पाया था। मैंने महसूस किया कि, श्रीमाताजी के कथनानुसार प्रतिदिन देवी–कवच आवश्यक था। मैं अत्यन्त शान्त थी। उनके फोटो के सम्मुख बैठकर मैंने कहा, "श्रीमाताजी, आपकी बेटी आपकी हर इच्छा को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करने को तैयार है – जैसे राखो वैसे रहूँ।" कोई भी घर में घुसने की हिम्मत न कर पा रहा था, परन्तु मैं बाहर बैठे लोगों के लिए खाना बनाने हेतु अन्दर गई। मुझे पूर्ण विश्वास था कि हम सहजयोगी हैं और हमें कुछ नहीं हो सकता।

एक सहजयोगी समुद्रतट के निकट अपने भाई के घर में था। उसने तीस फुट ऊँची सुनॉमी आसुरी लहर को पूरा तट लीलते हुए देखा। उसने श्रीमाताजी के 'रक्षाकरी' रूप को महसूस किया तथा शरण लेने के लिए केन्द्र की ओर दौड़ा। अगले तीन महीने उसने शान्तिपूर्वक ध्यानकेन्द्र में बिताये।

सागर को निरन्तर दहाड़ते हुए देख कर, अगले दिन मैंने समुद्र देव की कुमकुम, हल्दी, जल तथा पुष्प आदि से पूजा की और अपनी अन्तर–आत्मा से निकले – 'समुद्र–शान्त तथा भूमिकम्प–शान्त' मन्त्रों का उच्चारण किया। परिणामस्वरूप यहाँ समुद्र शान्त हो गया।

तीन दिनों के पश्चात जब मैं कार्यालय गई तो मेरे सहकर्मियों ने पूछा, "आप किस चक्की का आटा खाती हैं?" मैंने उत्तर दिया, "चक्की अवर्णनीय है क्योंकि ये साक्षात आदिशक्ति हैं – मेरी गुरु, श्रीमाताजी निर्मला देवी।"

अण्डमान क्षेत्र में सुनॉमी त्रासदी से लगभग 30-40 हजार लोगों की मृत्यु हो गई थी, परन्तु हम सभी सहजयोगी अपने पूरे सामान सहित पूर्णतः सुरक्षित रहे।"

जय श्रीमाता जी

(रूपान्तरित)

माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी

(डॉ राजीव कुमार)

(८१वें जन्मदिवस समारोह के सुअवसर पर श्री चरणों में समर्पित)

माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी
तुम पालनहारी, जग की रखवारी,
सब संकट टारी, दुःख भय-भंजनकारी

पर मैं क्या जानूं ये ऊँची बातें,
मेरी तो तू है बस मैय्या प्यारी
माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी।

देवों के ऊपर पहुँचाया
महादेव का मरम जताया,
शक्ति शिव का मिलन दिखाया
सदाशिव का मार्ग जताया,
अन्तर्मन प्रतिबिम्बित करवाया,
माँ मैंने ये सब बस यूंही पाया।

मन्त्रमुग्ध मैं अबोध बालक
मैं क्या जानूं ये ऊँची बातें
मुझे तो भाये तेरी छवि न्यारी
तेरी बिन्दिया प्यारी, तेरी महिमा भारी
मेरी तो तू है बस मैय्या प्यारी
माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी।

कौन मणिपुर, कैसा अनहद्
छोड़ चले हम इन चक्रों के चक्कर
सातों स्वर्गों के भी ऊपर,
बारह आदित्यों को वश में कर
सामूहिकता में पूरे जम कर
बस मस्त हुए चैतन्य को पीकर

.पूर्ण तृप्त हैं ये तेरे बालक
तेरी ममता के आभारी, तुझ पर बलिहारी,
तेरे आँचल की छाया न्यारी
तू राज दुलारी तेरी छवि प्यारी
मेरी तो तू है बस मैय्या प्यारी
माँ किस विधि करूं स्तुति तुम्हारी।

जय श्री माता जी

"आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् आपको कुण्डलिनी और सहजयोग का बहुत सा ज्ञान प्राप्त हो जाता है। परन्तु भक्ति के बिना सन्तुलन प्राप्त नहीं किया जा सकता । आपको भक्ति में डूब जाना है। भक्ति आपकी भावनाओं को समृद्ध करती है।

बिना आलोचना किए अन्य सहजयोगियों को महसूस करने का प्रयत्न करें। मैं आप लोगों के अस्तित्व, आपके सौन्दर्य एवं गरिमा का आनन्द ले रही हूँ। मेरी कामना है कि आप भी ऐसा ही कर सकें और स्वयं को समुद्र में पड़ी बूँद की तरह से महसूस कर सकें। भक्ति आपकी कोणिकताओं (कमियों) (Angularities) तथा बाधाओं को सामूहिक समन्वयता में विलीन कर देगी।"

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी
(निर्मला योग- 1983, से उद्धृत)
रूपान्तरित